दृष्टि The Vision

एडिटोरियल

(संग्रह)

जनवरी भाग-2

2022

दृष्टि, 641, प्रथम तल, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली-110009
फोन: 8750187501
ई-मेल: online@groupdrishti.com

अनुक्रम

संवैधानिक/प्रशासनिक घटनाक्रम **4**

- शासन 4.0: आवश्यकता और महत्त्व 4
- शहर सरकार को सशक्त बनाना 5
- संघीय भारत के समक्ष चुनौतियाँ 7
- बजट और शिक्षा 9

आर्थिक घटनाक्रम **12**

- पशुधन के लिये मोबाइल पशु चिकित्सक-इकाइयाँ 12
- अर्थव्यवस्था और अनौपचारिकता 13
- फार्मास्यूटिकल क्षेत्र को बढ़ावा 15

नोट :

अंतर्राष्ट्रीय घटनाक्रम **18**

- परिवर्तित विश्व व्यवस्था में भारत 18
- भारत-प्रशांत के लिये इंडो-जर्मन पार्टनरशिप 20

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी **22**

- क्वांटम प्रौद्योगिकी और भारत 22
- नवीकरणीय ऊर्जा: महत्त्व और संबद्ध समस्याएँ 24

भूगोल एवं आपदा प्रबंधन **27**

- शहरी भारत में आपदा प्रबंधन 27

नोट :

संवैधानिक/प्रशासनिक घटनाक्रम

शासन 4.0: आवश्यकता और महत्त्व

संदर्भ

आने वाले वर्ष में कोविड महामारी और इससे पैदा हुए असंख्य संकटों में कमी आनी शुरू हो सकती है, लेकिन जलवायु कार्रवाई की विफलता से लेकर सामाजिक एकता के क्षरण तक कई ऐसी ऐसी चुनौतियाँ मौजूद हैं जिनका कोई समाधान होता नज़र नहीं आता।

इन चुनौतियों से निपटने के लिये नेतृत्वकर्त्ताओं को एक अलग और अधिक समावेशी शासन स्वरूप अपनाने की आवश्यकता होगी। हालाँकि, हाल के समय में लोगों का अपने नेतृत्वकर्त्ताओं पर से भी भरोसा कम होता दिख रहा है।

सुशासन का स्वरूप या मॉडल (Good Governance Model) अर्थव्यवस्था और सामाजिक व्यवस्था को एक अदृश्य समर्थन प्रदान करता है। यह उपयुक्त समय है कि विश्व शासन के अपने पिछले, अनुपयुक्त स्वरूपों से अब शासन 4.0 (Governance 4.0) की ओर आगे बढ़े जिसका प्रस्ताव विश्व आर्थिक मंच (World Economic Forum- WEF) के दावोस शिखर सम्मेलन में किया गया है और जो अधिकाधिक समावेशन के साथ दीर्घकालिक रणनीतिक धारणा पर केंद्रित है।

शासन और इसके स्वरूप:

- परिचय: 'शासन' (Governance) का आशय निर्णय लेने और निर्णय लागू किये जाने की प्रक्रिया से हैं। इसका उपयोग कॉर्पोरेट शासन, अंतर्राष्ट्रीय शासन, राष्ट्रीय शासन या स्थानीय शासन जैसे विभिन्न संदर्भों में किया जा सकता है।
- शासन के स्वरूप:
  - शासन 1.0 (Governance 1.0): द्वितीय विश्व युद्ध के बाद शासन 1.0 की अवधि में सार्वजनिक और कॉर्पोरेट शासन दोनों को ही एक 'मज़बूत नेता' के शासन द्वारा चिह्नित किया गया।
    - इस प्रकार का नेतृत्व एक ऐसे समाज के लिये बेहतर था, जहाँ सूचना की लागत अधिक थी, पदानुक्रमित प्रबंधन अपेक्षाकृत सुचारू रूप से कार्य करता था और तकनीकी एवं आर्थिक प्रगति ने लगभग सभी को लाभान्वित किया था।
  - शासन 2.0 (Governance 2.0): इस मॉडल का उभार 1960 के दशक के अंत में हुआ और इसने भौतिक संपदा की प्रधानता की पुष्टि की। इसका उभार 'शेयरधारक पूंजीवाद' (Shareholder Capitalism) और प्रगतिशील वैश्विक वित्तीयकरण (Progressive Global Financialization) के उदय के साथ-साथ हुआ।
    - इस मॉडल के तहत केवल शेयरधारकों के प्रति जवाबदेह प्रबंधकों ने सर्वोच्च स्थान प्राप्त किया। हालाँकि वर्ष 2008 के वैश्विक वित्तीय संकट ने इस मॉडल को एक झटका दिया लेकिन इसकी संकीर्ण दृष्टि आगे भी बनी रही है।
  - शासन 3.0 (Governance 3.0): इसके अंतर्गत 'निर्णयन प्रक्रिया' में 'संकट प्रबंधन' काफी महत्त्वपूर्ण हो गया, जहाँ नेतृत्वकर्त्ताओं का मुख्य ध्यान परिचालन संबंधी विषयों पर रहा है और वे संभावित अनपेक्षित परिणामों के प्रति एक सापेक्षिक उपेक्षा का प्रदर्शन करते हैं।
    - कोविड संकट का उभार इसी शासन 3.0 के दौरान हुआ है और इस मॉडल के 'परीक्षण-और-त्रुटि दृष्टिकोण' (Trial-And-Error Approach) से महामारी के बेतरतीब प्रबंधन एवं प्रभाव सामने आए हैं।
- खराब शासन के परिणाम: खराब या कमज़ोर शासन आपदा जोखिम का चालक है और यह गरीबी एवं असमानता, खराब नियोजित शहरी विकास जैसे कई अन्य जोखिम चालकों से संबद्ध है।
  - कुशासन का परिणाम प्राय: सर्वाधिक भेद्य/संवेदनशील समूह, गरीब, कमज़ोर, महिलाओं, बच्चों और पर्यावरण को भुगतना पड़ता है।

- एक नए शासन मॉडल की आवश्यकता:
  - वैश्विक शासन की अनसुलझी समस्या: संस्थाएँ और नेतृत्वकर्त्ता दोनों ही अब अपने उद्देश्य के लिये उपयुक्त नहीं हैं।
  - चूँकि चौथी औद्योगिक क्रांति (Fourth Industrial Revolution) और जलवायु परिवर्तन द्वारा वर्तमान जीवन को बाधित किया जा रहा है, ऐसे में सार्वजनिक और कॉर्पोरेट शासन में परिवर्तन की आवश्यकता है।
  - विश्व के लिये एक नया शासन मॉडल अत्यंत आवश्यक है, जो व्यापार एवं वित्त जगत को प्राथमिकता देने के बजाय समाज और प्रकृति की प्रधानता पर ध्यान केंद्रित करता हो।

शासन 4.0 में निहित दृष्टिकोण

- दीर्घकालिक रणनीतिक योजना का निर्माण: शासन 4.0 के तहत वर्तमान अल्पकालिक प्रबंधन दृष्टिकोण को दीर्घकालिक रणनीतिक दृष्टिकोण द्वारा प्रतिस्थापित करना होगा।
  - वहीं महामारी, सामाजिक-आर्थिक संकट और मानसिक स्वास्थ्य जैसी समस्याओं पर ध्यान देने के साथ-साथ जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिये कार्रवाई, मानव गतिविधि से होने वाली जैव विविधता की हानि एवं पर्यावरण की क्षति को दूर करने और अनैच्छिक प्रवास जैसी संबंधित चुनौतियों को संबोधित किया जाना भी आवश्यक है।
- व्यवसायों द्वारा उत्तरदायित्व ग्रहण करना: नए मॉडल के अंतर्गत अतीत के 'टनल विज़न' (Tunnel Vision) या संकीर्ण दृष्टिकोण और अद्योमुखी दृष्टिकोण (Top-Down Approach) को प्रतिस्थापित करना होगा। विसंगतियों से भरी जटिल और परस्पर-संबद्ध दुनिया में समाज के प्रत्येक हितधारक की भूमिकाओं में परिवर्तन लाया जाना चाहिये।
  - व्यवसाय अब अपने सामाजिक एवं पारिस्थितिक प्रभावों की उपेक्षा नहीं कर सकते और यह जवाबदेही सरकार की होगी कि वह सुनिश्चित करे कि व्यवसाय उत्तरदायित्व ग्रहण करें।
- उभरती प्राथमिकताएँ: अर्थशास्त्र की संकीर्ण अवधारणा और अल्पकालिक वित्तीय हितों पर बल देना बंद करना होगा। इसके बजाय समाज और प्रकृति की प्रधानता किसी भी नई शासन प्रणाली के मूल में निहित होनी चाहिये।
  - निश्चय ही वित्त और व्यवसाय अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं लेकिन उन्हें समाज और प्रकृति की सेवा करनी चाहिये, न कि समाज और प्रकृति का उपयोग करना चाहिये।
- नए नेतृत्वकर्त्ता: कई नेतृत्वकर्त्ता शासन के एक नए युग का नेतृत्व करने को इच्छुक हैं, जिनमें पर्यावरण, समाज एवं शासन संबंधी मेट्रिक्स की वकालत करने वाले व्यावसायिक कार्यकारी से लेकर कुछ राजनीतिक नेता तक सभी शामिल हैं।
  - ऐसे नेतृत्वकर्त्ताओं का स्वागत किया जाना चाहिये जो अपने संकीर्ण हितों के बाहर मार्गदर्शक के रूप में कार्य करते हैं और जलवायु परिवर्तन से मुकाबले तथा सामाजिक अन्याय को दूर करने के लिये विशिष्ट कार्रवाई का समर्थन करते हैं।
  - उत्तरदायी एवं अनुक्रियाशील शासन (Responsible and Responsive Governance) का सर्वोत्कृष्ट पैमाना आज इस बात की माप करता है कि नेतृत्वकर्त्ता किस हद तक 'अंशधारक उत्तरदायित्व' (Shareholder Responsibility) पर 'हितधारक उत्तरदायित्व' (Stakeholder Responsibility) की अधिभाविता को स्वीकार करते हैं और सहमति रखते हैं।
    - यद्यपि हितधारक उत्तरदायित्व का मापन अभी भी अपनी आरंभिक अवस्था में है, सुसंगत मेट्रिक्स का विकास हमें यह तय करने में सक्षम करेगा कि नेतृत्वकर्त्ता अपनी भूमिका और उत्तरदायित्व के संबंध में एक व्यापक दृष्टिकोण अपना रहे हैं या नहीं।

शहर सरकार को सशक्त बनाना

संदर्भ

शहरी स्थानीय सरकारें (पंचायती राज संस्थाओं के साथ) भारत में स्थानीय सरकार की इकाइयों के रूप में लंबे समय से अस्तित्व में रही हैं। ये लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण के उद्देश्य से स्थापित की गईं थी।

यहाँ तक कि कोविड-19 महामारी के समय भी भारत में त्रि-स्तरीय सरकारों ने रोकथाम रणनीतियों, स्वास्थ्य देखभाल, क्वारंटाइन एवं परीक्षण सुविधाओं के कार्यान्वयन, टीकाकरण शिविर के आयोजन और आवश्यक वस्तुओं एवं सेवाओं की आपूर्ति को बनाए रखने में अग्रणी भूमिका निभाई।

हालाँकि इसके साथ उनकी वित्तीय स्थिति गंभीर दबाव में आ गई है, जिससे उन्हें अपने खर्चों में कटौती करने और विभिन्न स्रोतों से धन जुटाने के लिये विवश होना पड़ा है।

उच्च संसाधन उपलब्धता के माध्यम से इन नागरिक निकायों का वित्तीय सशक्तिकरण उनकी कार्यात्मक स्वायत्तता की वृद्धि करने और उनके शासन को सशक्त करने के लिये आवश्यक है।

शहरी स्थानीय सरकारें (Urban Local Governments)

- शहरी सशक्तिकरण की शुरुआत: भारत में शहरी सशक्तिकरण के प्रति सामान्य दृष्टिकोण प्राय: चरणबद्ध रूप से इसे सशक्त बनाने का रहा है।
  - 'शहर' को समझने और अखिल भारतीय दृष्टिकोण के साथ योजना निर्माण के रूप में पहला हस्तक्षेप 1980 के दशक में किया गया जब 'चार्ल्स कोरिया' (Charles Correa) की अध्यक्षता में 'राष्ट्रीय शहरीकरण आयोग' (National Commission on Urbanisation) (1988) का गठन किया गया।

हालाँकि पूर्व की पंचवर्षीय योजनाओं में भी इनके संदर्भ मौजूद थे।

- अन्य प्रावधान: एक अन्य महत्त्वपूर्ण हस्तक्षेप भारत के संविधान में 74वें संशोधन के माध्यम से किया गया जिसने शहरी स्थानीय निकायों को 12वीं अनुसूची में सूचीबद्ध 18 कार्यों को संपन्न करने का अधिकार सौंपा।
  - स्थानीय निकायों पर 15वें वित्त आयोग की रिपोर्ट ने शहर के शासनिक ढाँचे और उनके वित्तीय सशक्तिकरण की आवश्यकता पर बल दिया था।

चुनौतियाँ

- संसाधनों की कमी: 221 नगर निगमों पर भारतीय रिज़र्व बैंक (RBI) के सर्वेक्षण (2020-21) से पता चला है कि इनमें से 70% से अधिक निगमों के राजस्व में गिरावट आई है जबकि इसके विपरीत उनके व्यय में लगभग 71.2% की वृद्धि हुई है।
- RBI रिपोर्ट में संपत्ति कर के सीमित कवरेज और नगर निगम के राजस्व की वृद्धि में इसकी विफलता पर भी प्रकाश डाला गया है।
- आर्थिक सहयोग और विकास संगठन (Organisation for Economic Co-operation and Development-OECD) के आँकड़ों से भी पता चलता है कि भारत में संपत्ति कर संग्रह दर (संपत्ति कर और सकल घरेलू उत्पाद का अनुपात) का स्तर विश्व में न्यूनतम है।
- निम्न कार्यात्मक स्वायत्तता: महामारी के दौरान राष्ट्रीय, राज्य और ज़िला स्तर के नेताओं को तो आपदा शमन रणनीतियों में एक भूमिका सौंपी गई थी, लेकिन नगर निगमों के प्रमुखों को इस समूह में शामिल नहीं किया गया था।
- जबकि आपदा प्रबंधन कार्ययोजना के अंतर्गत शहर महामारी से लड़ने में सबसे आगे रहे हैं, वहीं उनके निर्वाचित नेतृत्व को इसमें प्रतिनिधित्व नहीं दिया गया।
- शहरों को राज्य सरकारों के सहायक/अधीनस्थ के रूप में देखने का पुरातन दृष्टिकोण अभी भी नीतिगत प्रतिमान पर हावी है।
- अनुदान में गिरावट: चुंगी (Octroi)—जो किसी कस्बे या शहर में प्रवेश करने वाली विभिन्न वस्तुओं पर अधिरोपित शुल्क था, शहरों की कमाई का प्रमुख माध्यम होता था, लेकिन इसे बाद में जनसांख्यिकीय प्रोफाइल के एक फ़ॉर्मूले के आधार पर शहरी स्थानीय निकायों को प्रदत्त अनुदान (वित्त आयोग द्वारा अनुशंसित) द्वारा प्रतिस्थापित कर दिया गया।
- पूर्व में जहाँ शहरी केंद्रों के कुल राजस्व व्यय के लगभग 55% की पूर्ति चुंगी द्वारा हो जाती थी, अब प्रदत्त अनुदान उनके केवल 15% व्यय को ही कवर कर पाता है।
- इसके परिणामस्वरूप लोगों पर अधिक करों का बोझ लादने और नगर निकायों की सेवाओं के निजीकरण/आउटसोर्सिंग के एक दुष्चक्र का निर्माण हुआ है। GST ने इस समस्या को और गंभीर कर दिया है।
- संरचनात्मक समस्याएँ: कुछ शहरी स्थानीय सरकारों के पास अपना भवन तक नहीं है या अगर है भी तो वहाँ शौचालय, पेयजल और बिजली कनेक्शन जैसी बुनियादी सुविधाओं का अभाव है।
- इसके अलावा, स्थानीय निकायों में सचिव, कनिष्ठ इंजीनियर, कंप्यूटर ऑपरेटर और डेटा एंट्री ऑपरेटर जैसे सहायक कर्मचारियों और कर्मियों की कमी है। यह उनके कामकाज और सेवाओं के वितरण को प्रभावित करता है।

आगे की राह

- शहरी सरकारों के लिये '3F': शहर की सरकारों के पास कार्यात्मक स्वायत्तता होनी चाहिये और इसे '3F' (Functions, Finances and Functionaries) के हस्तांतरण के माध्यम से सुनिश्चित किया जा सकता है। इनके बिना कार्यात्मक स्वायत्तता की बात कोरी ही सिद्ध होगी।
  - केरल के लोक योजना मॉडल (People's Plan Model) में राज्य के योजना बजट का 40% स्थानीय निकायों (प्रत्यक्ष रूप से देय) के लिये है जहाँ उन्हें योजना निर्माण जैसे महत्त्वपूर्ण विषयों का हस्तांतरण भी किया गया है।
    - इसने शहरी शासन के लिये एक नए आयाम का मार्ग प्रशस्त किया। अन्य राज्यों में भी इस तरह के उपाय किये जाने चाहिये।
  - इसके साथ ही, शहरों में नेतृत्व को पाँच वर्ष की अवधि के लिये चुना जाना चाहिये। कुछ शहरों में महापौर का कार्यकाल महज़ एक वर्ष का रहा है। अधिकारियों को स्थायी कैडर के साथ शहरों में स्थानांतरित किया जाना चाहिये।
- आयकर संग्रह से अनुदान: स्कैंडिनेवियाई देश अपने कार्यों—शहरी नियोजन से लेकर परिवहन और अपशिष्ट प्रबंधन तक, के सुप्रबंधन में सफल रहे हैं जहाँ वे नागरिकों से एकत्र किये गए आयकर का एक विशिष्ट अंश शहर की सरकारों को प्रदान करते हैं।
  - यदि भारत में बड़े शहरी समूह शहर के मामलों के प्रबंधन के लिये आयकर का एक निश्चित प्रतिशत प्राप्त कर सकें तो यह वास्तव में उनकी स्थिति में सुधार लाने में मदद करेगा।
  - पूर्व में शहरों से एकत्र किये गए आयकर का 10% केंद्र सरकार द्वारा प्रत्यक्ष राजस्व अनुदान के रूप में शहरों को वापस कर देने की अनुशंसा भी की गई थी।
- रूपांतरण के लिये व्यवहार परिवर्तन की आवश्यकता: शहरों को शासन के महत्त्वपूर्ण केंद्रों के रूप में देखा जाना चाहिये जहाँ लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण आश्चर्यजनक परिणाम ला सकता है।
  - इसके साथ ही पारदर्शिता और लोगों की पर्याप्त भागीदारी भी सुनिश्चित करने की आवश्यकता है।
  - शहरों को महज़ उद्यमिता के स्थान के रूप में नहीं देखा जाना चाहिये जहाँ एकमात्र प्रेरक शक्ति उन्हें निवेश आकर्षित करने के लिये प्रतिस्पर्द्धी बनाना हो।
    - संसाधनों पर पर्याप्त ध्यान देकर उन्हें नियोजित विकास के क्षेत्र के रूप में देखा जाना चाहिये।

संघीय भारत के समक्ष चुनौतियाँ

26 जनवरी, 1950 को जब भारतीय संविधान लागू हुआ तो यह एक ऐसे राष्ट्र के लिये एक बड़ा कदम था जो न्याय, समता, स्वतंत्रता और बंधुत्व के आदर्शों की प्राप्ति की लालसा रखता था।

उपमहाद्वीपीय प्रकृति के देश में यह आवश्यक है कि संविधान की प्रस्तावना में वर्णित आदर्श शासन के सभी स्तरों तक विस्तारित हों। संविधान में समता पर दिया गया समग्र ज़ोर संघीय भावना और विचारों के ईर्द-गिर्द निर्मित सभी व्यवस्थाओं में नज़र आता है।

विभिन्न राज्यों की आबादी की अलग-अलग आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए संविधान के प्रारूपकारों ने सरकारों के विभिन्न स्तरों पर शक्तियों और उत्तरदायित्वों के न्यायसंगत हिस्सेदारी के प्रावधान किये। दुर्भाग्य से हाल के वर्षों में भारत में संघीय व्यवस्था और संस्थानों पर सबसे गहरे हमले हुए हैं।

भारत की संघीय संरचना

- भारतीय संघवाद की प्रकृति: संघीय सिद्धांतकार के.सी. व्हेयर ने तर्क दिया है कि भारतीय संविधान की प्रकृति अर्द्ध-संघीय (Quasi-federal) है।
  - सतपाल बनाम पंजाब राज्य एवं अन्य (1969) में सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि भारत का संविधान संघीय या एकात्मक की तुलना में अर्द्ध-संघीय अधिक है।
- संघवाद सुनिश्चित करने हेतु संवैधानिक प्रावधान: राज्यों और केंद्र की संबंधित विधायी शक्तियाँ भारतीय संविधान के अनुच्छेद 245 से 254 तक वर्णित हैं।

- 7वीं अनुसूची में शामिल सूचियाँ—संघ सूची, राज्य सूची और समवर्ती सूची भी शक्तियों के न्यायसंगत वितरण की पुष्टि करती हैं, जहाँ सरकार के प्रत्येक स्तर का अपना अधिकार क्षेत्र निश्चित है जो उन्हें संदर्भ-संवेदनशील निर्णयन (Context Sensitive Decision-making) में सक्षम बनाता है।
  - अनुच्छेद 263 में संघ और राज्यों के बीच व्यवहार के सुचारू संक्रमण और विवादों के समाधान के लिये एक अंतर-राज्य परिषद (Inter-State Council) की स्थापना का उपबंध किया गया है।
  - अनुच्छेद 280 में संघ और राज्यों के बीच वित्तीय संबंधों और शर्तों को परिभाषित करने हेतु वित्त आयोग (Finance Commission) के गठन का प्रावधान किया गया है।
  - इसके साथ ही, ज़मीनी स्तर पर लोकतंत्र को मज़बूत करने के लिये 73वें और 74वें संशोधनों के माध्यम से स्थानीय स्वशासन निकायों के गठन के प्रावधान शामिल किये गए।
- संघवाद को महत्त्व देते संस्थान: पूर्ववर्ती योजना आयोग के पास राज्यव्यवस्था की संघीय प्रकृति से संबंधित मुद्दों पर चर्चा के लिये हमेशा एक अवसर रहता था और वह राज्यों की विभिन्न विकासात्मक आवश्यकताओं के प्रति संवेदनशील रहा था।
  - अंतर-राज्य न्यायाधिकरण (Inter-State Tribunals), राष्ट्रीय विकास परिषद (National Development Council) और अन्य कई अनौपचारिक निकायों ने संघ, राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों के बीच परामर्श के माध्यम के रूप में कार्य किया है।
  - इन निकायों ने संघ और राज्यों के बीच सहकारी भावना को बनाए रखते हुए विचार-विमर्श के माध्यम से कठिन समस्याओं से लोकतांत्रिक तरीके से निपटने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

भारत की संघीय भावना को बनाए रखने के मार्ग में आने वाली चुनौतियाँ

- कई निकायों का अप्रभावी कार्यकरण: योजना आयोग को समाप्त कर दिया गया है, पिछले सात वर्षों में अंतर-राज्य परिषद की केवल एक बार बैठक हुई है और राष्ट्रीय विकास परिषद की कोई बैठक ही नहीं हुई है।
  - इस घटनाक्रम ने संघ और राज्यों के बीच सहकारी भावना को बनाए रखने में बाधा उत्पन्न की है।
- कर व्यवस्था की समस्याएँ: दोषपूर्ण वस्तु एवं सेवा कर (GST) ने पहले ही राज्यों को उपलब्ध अधिकांश स्वायत्तता का हरण कर लिया है और देश की अप्रत्यक्ष कर व्यवस्था को उसकी प्रकृति में एकात्मक बना दिया है।
  - GST व्यवस्था के अंतर्गत राज्यों को प्राप्त मुआवज़े की गारंटी का महामारी काल में केंद्र सरकार द्वारा बार-बार उल्लंघन किया गया। राज्यों को उनके बकाया का भुगतान करने में देरी से आर्थिक मंदी का प्रभाव और सघन हुआ।
  - राज्य सूची के मामले में राज्यों की स्वायत्तता का अतिक्रमण: पिछले कुछ वर्षों में संबंधित राज्यों को संदर्भित किये और उनका परामर्श लिये बिना केंद्र सरकार के स्तर से कई महत्त्वपूर्ण एवं राजनीतिक रूप से संवेदनशील निर्णय लिये गए हैं, जैसे:
  - अनुच्छेद 370 को जम्मू-कश्मीर के राज्य विधानमंडल से किसी परामर्श के बिना ही हटा दिया गया।
  - संसद ने तीन विवादास्पद कृषि कानूनों को लागू करने के लिये राज्य सूची के विषय "कृषि" का अधिनियमन किया और अपने अधिकार क्षेत्र से परे जाते हुए इन्हें राज्यों पर लागू कर दिया।
  - नई शिक्षा नीति 2020 को भी राज्यव्यवस्था की संघीय प्रकृति के अतिक्रमण के रूप में चिह्नित किया गया है।
  - इसके अतिरिक्त, BSF का अधिकार क्षेत्र असम, पश्चिम बंगाल और पंजाब में इन राज्यों से किसी परामर्श के बिना ही विस्तारित कर दिया गया।
- कोविड-19 का प्रभाव: राज्यों को कोविड-19 प्रबंधन से संबंधित विभिन्न पहलुओं, जैसे परीक्षण किटों की खरीद, टीकाकरण, आपदा प्रबंधन अधिनियम 2005 के उपयोग और अनियोजित राष्ट्रीय लॉकडाउन में बेहद सीमित भूमिका ही सौंपी गई।
  - इतना ही नहीं, कोविड की दूसरी लहर के दौरान अपूर्ण तैयारी के कारण आलोचना की शिकार हुई केंद्र सरकार ने स्वास्थ्य को 'राज्य सूची का विषय' बताते हुए विफलता का दोष राज्यों पर थोपने का प्रयास किया।

आगे की राह

- संघवाद को महत्त्व देना: यह रेखांकित किया जाना चाहिये कि संविधान का अनुच्छेद 1 घोषित करता है कि "इंडिया यानी भारत राज्यों का संघ होगा" और इसलिये ऐसी व्यवस्था में शक्तियों का हस्तांतरण आवश्यक है।
  - भारत के राष्ट्रीय चरित्र की रक्षा के लिये भारत की राजव्यवस्था के संघीय स्वरूप को सचेत रूप से महत्त्व देना आवश्यक है।
  - दूसरे के संघीय अधिकारों को हड़पने की कोशिश करने वालों के विरुद्ध सभी स्तरों पर संघर्ष छेड़ा जाना चाहिये, चाहे वह राज्यों के विरुद्ध स्थानीय सरकार का हो या केंद्र के विरुद्ध राज्य सरकार का।
- अंतर-राज्यीय संबंधों को मज़बूत बनाना: राज्य सरकारों को विशेष रूप से संघवाद के कोण पर ध्यान केंद्रित करते हुए मानव संसाधनों की तैयारी पर विचार करना चाहिये जो केंद्र द्वारा प्रस्तुत परामर्श प्रक्रियाओं में जवाब तैयार करने में उनका समर्थन कर सके।
  - केवल संकट की स्थिति में एक-दूसरे तक पहुँचने के बजाय मुख्यमंत्रियों को इस मुद्दे पर नियमित संलग्नता के लिये एक मंच का निर्माण करना चाहिये।
    - यह GST मुआवजे का विस्तार वर्ष 2027 तक करने और करों के विभाज्य पूल में उपकर (cess) को शामिल करने जैसी प्रमुख माँगों की पैरवी में महत्त्वपूर्ण कदम साबित होगा।
- संघवाद में संतुलन के साथ सुधारों को लागू करना: भारत जैसे विविधतापूर्ण देश में संघवाद के स्तंभों (राज्यों की स्वायत्तता, केंद्रीकरण, क्षेत्रीयकरण आदि) के बीच एक उचित संतुलन की आवश्यकता है। अत्यधिक राजनीतिक केंद्रीकरण या अराजक राजनीतिक विकेंद्रीकरण से बचना चाहिये क्योंकि दोनों ही भारतीय संघवाद को कमज़ोर बनाते हैं।
  - विवादास्पद नीतिगत मुद्दों पर केंद्र और राज्यों के बीच राजनीतिक सद्भावना विकसित करने के लिये अंतर-राज्य परिषद के संस्थागत तंत्र का उचित उपयोग सुनिश्चित किया जाना चाहिये।

बजट और शिक्षा

संदर्भ

कोविड-19 महामारी की शुरुआत के बाद से भारत की शिक्षा प्रणाली की पहले से ही बदहाल स्थिति और बदतर हो गई है। महामारी के कारण विद्यालयी पठन-पाठन लगभग 20 माह से अवरुद्ध है जिससे बच्चों के विशेष रूप से गरीब और वंचित तबकों के बच्चों के सीखने के प्रतिफलों (learning Outcomes) पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। भारत में शिक्षा पर तुलनात्मक रूप से निम्न सार्वजनिक व्यय और विभिन्न मंत्रालयों के अंतर्गत शिक्षा पर सार्वजनिक व्यय के आँकड़ों की अनुपलब्धता भारत के शिक्षा क्षेत्र की दुर्दशा को और गंभीर बनाती है। ये चुनौतियाँ वित्त वर्ष 2022-23 के आगामी बजट में शिक्षा क्षेत्र के मद्देनज़र सुधार की व्यापक गुंजाइश रखती हैं।

शिक्षा और सार्वजनिक व्यय

- भारत एवं अन्य देश: महामारी से पहले भी भारत के अधिकांश राज्यों में शिक्षा पर सार्वजनिक व्यय का स्तर अन्य मध्यम आय वाले देशों की तुलना में कम ही था।
  - शिक्षा मंत्रालय के 'शिक्षा पर बजट व्यय के विश्लेषण' (Analysis of Budgeted Expenditure on Education) के अनुसार, अधिकांश प्रमुख राज्यों द्वारा शिक्षा पर राज्य की आय का 2.5% से 3.1% ही व्यय किया जा रहा था।
  - इसकी तुलना में वर्ष 2010-11 और 2018-19 के बीच निम्न-मध्यम आय वाले देशों ने (एक समूह के रूप में) अपने सकल घरेलू उत्पाद का 4.3% भाग शिक्षा पर व्यय किया था।
- बजट में शिक्षा का अंश: देश में अत्यंत गंभीर शिक्षा संकट के बीच भी वर्ष 2021-22 के बजट में शिक्षा पर सार्वजनिक व्यय की वृद्धि के संबंध में केंद्र सरकार और कई राज्य सरकारों द्वारा नकारात्मक प्रवृत्ति ही दर्शाई गई।
  - समग्र बजट के आकार में वृद्धि के बावजूद शिक्षा विभाग के लिये केंद्र सरकार के आवंटन में पिछले वर्ष की तुलना में कटौती की गई थी।

- देश के प्रमुख राज्यों और दिल्ली में से 8 राज्यों ने वर्ष 2020-21 की तुलना में वर्ष 2021-22 में शिक्षा विभागों के लिये अपने बजट आवंटन को या तो कम कर दिया या लगभग पूर्ववत ही बनाए रखा।
  - 7 राज्यों ने अपने आवंटन में 2-5% की मामूली वृद्धि की।
  - केवल 6 राज्यों ने अपने आवंटन में 5% से अधिक की वृद्धि की, हालाँकि यह देखा जाना शेष है कि बजट आवंटन की तुलना में कितना वास्तविक व्यय किया जाता है।

- शिक्षा पर सार्वजनिक व्यय में वृद्धि की आवश्यकता:
  - सदृश GDP वाले देशों की तुलना में कम व्यय: यूनेस्को का '2030 फ्रेमवर्क फॉर एक्शन' सार्वजनिक शिक्षा व्यय स्तर को सकल घरेलू उत्पाद के 4-6% और सार्वजनिक व्यय के 15% -20% के बीच रखने की सलाह देता है।
    - विश्व बैंक के हाल के एक अध्ययन में कहा गया है कि भारत ने अपने बजट का 14.1% शिक्षा पर खर्च किया, जबकि लगभग समान स्तर के GDP वाले वियतनाम में यह 18.5% और इंडोनेशिया में 20.6% रहा था।
    - चूँकि भारत में इन देशों की तुलना में 19 वर्ष से कम आयु की जनसंख्या का प्रतिशत अधिक है, इसलिये वास्तव में भारत को इन देशों की तुलना में बजट का अधिक हिस्सा आवंटित करना चाहिये।
  - लॉकडाउन से वंचित तबके को बड़ा नुकसान: प्री-स्कूल और स्कूल में नामांकित कुल बच्चों में से अधिकांश बच्चे स्कूल बंद रहने के 20 माह के दौरान सार्थक व्यवस्थित सीखने की प्रक्रिया से दूर रहे।
    - उन्होंने न केवल बुनियादी अक्षर और अंक कौशल खो दिया, बल्कि उनके सीखने की क्षमता भी प्रभावित हुई।
    - शिक्षकों से संपर्क के अभाव में लाखों बच्चे शिक्षा से वंचित हुए।
    - भारत में ओमिक्रॉन लहर की प्रत्याशा में अंतर्राष्ट्रीय रुझानों के विपरीत स्कूलों को फिर से बंद करने की जल्दबाज़ी की गई।
  - शिक्षक प्रशिक्षण को प्रतिस्थापित कर सकने की प्रौद्योगिकी की विफलता: कई राज्य सरकारें और केंद्र सरकार शिक्षा में प्रौद्योगिकी का उपयोग करने के लिये सार्वजनिक संसाधनों का व्यय कर रही हैं, हालाँकि इस बारे में कोई स्पष्टता नहीं है कि प्रौद्योगिकी पर कितना सार्वजनिक संसाधन खर्च किया जा रहा है।
    - इसके अलावा ऑनलाइन लर्निंग की प्रभावकारिता को लेकर संदेह मौजूद हैं क्योंकि प्री-रिकार्डेड विडियो तक भी 20% से कम छात्रों की पहुँच है।

- व्यय डेटा की अस्पष्टता- एक अंतर्निहित समस्या: वर्ष 2020-21 के आर्थिक सर्वेक्षण के अनुसार, शिक्षा पर केंद्र और राज्य सरकारों का संयुक्त व्यय सकल घरेलू उत्पाद के 2.8% होने का अनुमान था (वर्ष 2018-19), जबकि शिक्षा मंत्रालय के आँकड़े से पता चलता है कि इसी वर्ष शिक्षा पर सार्वजनिक व्यय वर्ष 2011-12 में 3.8% से बढ़ते हुए सकल घरेलू उत्पाद के 4.3% तक पहुँच गया था।
  - आँकड़ों में यह अंतर शिक्षा मंत्रालय के अलावा अन्य मंत्रालयों द्वारा शिक्षा पर व्यय को संलग्न करने के कारण है।
    - उदाहरण के लिये सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय द्वारा आंगनवाड़ी, छात्रवृत्ति आदि पर किये गए व्यय और विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय द्वारा उच्च शिक्षा पर किया गया व्यय।
  - हालाँकि इन व्ययों की संरचना आसानी से उपलब्ध नहीं है क्योंकि विभागों (शिक्षा मंत्रालय के अलावा) के शिक्षा व्यय को स्तर के आधार पर नहीं दर्शाया जाता है।
    - राज्य सरकारों के अन्य विभागों द्वारा शिक्षा पर किये जाने वाले व्यय का आकलन और अस्पष्ट है क्योंकि वे शिक्षा पर अलग से व्यय की व्यवस्था भी नहीं करते हैं।

आगे की राह

- शिक्षा प्रणाली को पुनर्जीवित करने हेतु बहु-आयामी दृष्टिकोण: कोविड-19 महामारी के कारण उत्पन्न संकट भारत की सार्वजनिक शिक्षा प्रणाली की लंबे समय से जारी निम्न वित्तपोषण की समस्या को दूर करने का एक अवसर हो सकता है।
  - शिक्षा प्रणाली को अब न केवल कई वर्षों के लिये संसाधनों का उपयोग करने की आवश्यकता है, बल्कि गरीब और वंचित बच्चों की आवश्यकताओं पर भी ठोस ध्यान देने की ज़रूरत है जो इस तरह के शैक्षिक संकटों में प्रतिकूल रूप से प्रभावित होने की सर्वाधिक संभावना रखते हैं।

- हालाँकि, सार्वजनिक व्यय की वृद्धि करना एक आवश्यकता तो है लेकिन सभी समस्याओं के समाधान के लिये उपयुक्त शर्त नहीं है। यह देखा जाना भी आवश्यक है कि सार्वजनिक धन कहाँ खर्च किया जा रहा है, जबकि यह रिकॉर्ड रखना भी महत्त्वपूर्ण है कि संसाधनों का कितने प्रभावी ढंग से उपयोग किया जा रहा है।

- अतिरिक्त संसाधन: सार्वजनिक व्यय में वृद्धि के अलावा अतिरिक्त आवश्यकताओं में शामिल हैं:
  - बैक-टू-स्कूल अभियान और पुन: नामांकन अभियान
  - कुपोषण को दूर करने के लिये विस्तारित पोषण कार्यक्रम
  - बच्चों को विशेष रूप से भाषा और गणित सीखने में मदद करने के लिये पाठ्यक्रम का पुनर्गठन
  - उनके सामाजिक-भावनात्मक विकास का विशेष रूप से प्रारंभिक कक्षाओं में, समर्थन करना
  - अतिरिक्त शिक्षण सामग्री, शिक्षक प्रशिक्षण एवं कार्यान्वित समर्थन, अतिरिक्त शिक्षा कार्यक्रम और छुट्टियों एवं सप्ताहांत के दौरान अनुदेशात्मक समय में वृद्धि करना
- आगामी बजट से उम्मीदें: आँकड़ों की भरमार के इस युग में यह आश्चर्यजनक है कि शिक्षा क्षेत्र पर सार्वजनिक व्यय के आँकड़े आसानी से उपलब्ध नहीं हैं।
  - व्यय डेटा की अस्पष्टता आगामी बजट के लिये एक अवसर प्रदान करती है कि वह वर्ष 2021-22 में प्रमुख विभागों द्वारा शिक्षा के विभिन्न स्तरों के लिये आवंटित किये जाने वाले अतिरिक्त धन के संबंध में मौजूद भ्रम को दूर करे।
  - बजट में इस तरह के धन के लिये भी प्रावधान होना चाहिये जो विशेष रूप से बच्चों के सामने मौजूद शिक्षण संबंधी समस्या को संबोधित करे जहाँ वे सीखने के अवसरों से वंचित हुए हैं।

आर्थिक घटनाक्रम

पशुधन के लिये मोबाइल पशु चिकित्सक-इकाइयाँ

संदर्भ

यह एडिटोरियल 18/01/2022 को 'द हिंदू' में प्रकाशित "Just What The Doctor Ordered For The Livestock Farmer" लेख पर आधारित है। इसमें भारत में पशुधन स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं के संबंध में चर्चा की गई है। बीसवीं पशुधन गणना के अनुसार, भारत में वर्तमान में पशुधन आबादी लगभग 537 मिलियन है, जिनमें से 95.8% ग्रामीण क्षेत्रों में संकेंद्रित है। चूँकि देश की अधिकांश पशुधन आबादी ग्रामीण और दूरदराज़ के क्षेत्रों में संकेंद्रित है, ऐसे में पशु चिकित्सा सेवाओं तक पहुँच एक बड़ी चुनौती है। पशुपालकों को अपने पशुओं की उपचार आवश्यकताओं हेतु प्राय: अपने गाँवों से दूर जाना पड़ता है। इससे उनके पशुधन की लंबी आयु और उत्पादकता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। पशु चिकित्सा सेवाओं तक पहुँच की समस्या को दूर करने के लिये सरकार ने किसानों को घर तक सेवाएँ (doorstep services) प्रदान करने के उद्देश्य से मोबाइल पशु चिकित्सा इकाइयों (Mobile Veterinary Units- MVUs) की सुविधा शुरू की है। इस महत्त्वपूर्ण पहल के साथ ही निकट भविष्य में मुख्य ध्यान पशु चिकित्सा स्वास्थ्य देखभाल सेवाओं के उन्नयन, रोग निगरानी एवं प्रशिक्षण (CVE) और वास्तविक समय में रोगों की रिपोर्टिंग पर केंद्रित होगा।

पशुधन स्वास्थ्य और संबंधित पहल

- पशुपालन (Animal Husbandry) भारतीय कृषि का अभिन्न अंग है जो लगभग 55% ग्रामीण आबादी को आजीविका उपलब्ध कराता है। उल्लेखनीय है कि भारत में विश्व की सर्वाधिक पशुधन आबादी मौजूद है।
  - भारत को दूध आपूर्ति का लगभग 70% उन किसानों से प्राप्त होता है जिनके पास संख्या में पाँच से कम पशु हैं।
    - हालाँकि स्तनशोथ/'बोवाइन मैस्टाइटिस'(Bovine Mastitis) जैसी समस्याओं से प्रतिदिन लगभग 10 लीटर प्रतिफार्म दूध की हानि होती है जो लगभग 300-350 रुपए प्रति दिन की हानि के बराबर है।
    - इस प्रकार अधिकांश किसानों के लिये पशुओं का बीमार होना या फिर उनकी मृत्यु जीविका और भुखमरी से जुड़ा हुआ प्रश्न है।
  - पशु स्वास्थ्य की समस्या ग्रामीण समुदायों में दवा वितरकों के सेल्समैनों की बढ़ती उपस्थिति से भी जटिल हुई है।
- पशुधन के लिये सरकार की विभिन्न पहल:
  - राष्ट्रीय गोकुल मिशन (Rashtriya Gokul Mission): गोजातीय आबादी की स्वदेशी नस्लों के विकास एवं संरक्षण और दूध उत्पादन में वृद्धि के साथ इसे किसानों के लिये अधिक लाभकारी बनाने के लिये इस मिशन को शुरू किया गया।
  - राष्ट्रीय पशुधन मिशन (National Livestock Mission): पशुधन उत्पादन प्रणालियों में मात्रात्मक एवं गुणात्मक सुधार सुनिश्चित करने और सभी हितधारकों के क्षमता निर्माण से संबंधित।
  - राष्ट्रीय कृत्रिम गर्भाधान कार्यक्रम (National Artificial Insemination Programme): इस कार्यक्रम के अंतर्गत मादा नस्लों में गर्भधारण के नए तरीकों का सुझाव दिया जाएगा।
    - इसमें कुछ लैंगिक बीमारियों के प्रसार को रोकना भी शामिल है, ताकि नस्ल की दक्षता में वृद्धि की जा सके।
- पशुधन स्वास्थ्य और रोग नियंत्रण कार्यक्रम में सुधार: सरकार ने 'पशु चिकित्सा सेवाओं की स्थापना और सुदृढ़ीकरण मोबाइल पशु चिकित्सा इकाइयों (MVUs)' को शामिल कर इस कार्यक्रम के प्रावधानों को संशोधित किया है।
  - एक सामान्य पशु चिकित्सा इकाई (MVU) चार-पहिया वाहन होता है, जिसमें एक पशु चिकित्सक, एक पैरा-पशु चिकित्सक और एक चालक-सह-परिचारक के लिये कार्य करने की जगह होती है।
    - इसे 'डोरस्टेप डिलीवरी मॉडल' पर कार्यान्वित किया जाएगा।
  - इस वाहन में निदान, उपचार एवं मामूली सर्जरी के लिये उपकरण, पशुओं के इलाज हेतु अन्य बुनियादी चीज़ों, जागरूकता के प्रसार के लिये ऑडियो-विजुअल उपकरण एवं वाहनों की जीपीएस ट्रैकिंग जैसी आवश्यक सुविधाओं के लिये जगह बनाई गई है।

पशुधन स्वास्थ्य से संबद्ध चुनौतियाँ

- अपर्याप्त परीक्षण: मत्स्यपालन, पशुपालन एवं डेयरी मंत्रालय की संसदीय स्थायी समिति ने पाया है कि पशु रोगों के लिये परीक्षण और उपचार सुविधाओं की अपर्याप्तता या कमी एक बड़ी चुनौती है।
  - यह समस्या वर्तमान परिदृश्य में और भी विकट हो गई है जहाँ पशुजन्य रोगों के मामलों में भारी वृद्धि हो रही है।
- अप्रशिक्षित पशु स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता: ग्रामीण भारत में अप्रशिक्षित पशु स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता ही अधिक लोकप्रिय हैं क्योंकि वे परामर्श के लिये कम शुल्क लेते हैं और आसानी से उपलब्ध होते हैं।
  - इससे विशेष रूप से मैस्टाइटिस रोग के मामलों में त्रुटिपूर्ण नुस्खे के कारण एंटीबायोटिक दवाओं के अनुचित उपयोग की संभावना बनी होती है।
- AMR में वृद्धि: रोगाणुरोधी प्रतिरोध (Antimicrobial Resistance- AMR) से संबंधित समस्याएँ तब उत्पन्न होती हैं जब पशुओं पर आरंभ में असरकारक रही किसी दवा का असर बाद में होना बंद हो जाता है।
  - दवा की अधिक या कम मात्रा, गलत अवधि तक के लिये दवा का सेवन और 'ओवरप्रिस्क्रिप्शन' (Overprescription) जैसे कारकों से AMR की स्थिति उत्पन्न होती है।
- ऋण प्राप्त करने में समस्याएँ: एम.के. जैन समिति की रिपोर्ट में इस बात पर प्रकाश डाला गया है कि विशेष रूप से ऋण और पशुधन बीमा तक पहुँच के मामले में पशुपालक किसानों को पारंपरिक कृषकों की तुलना में अधिक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है।
  - ऋण की उपलब्धता की कमी भी किसानों को अपने पशुओं के लिये पशु चिकित्सा सेवाओं का उपयोग करने के प्रति हतोत्साहित करती है।

आगे की राह

- AMR को कम करना: विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) ने एंटीबायोटिक-प्रतिरोधी "प्राथमिकता रोगजनकों" को सूचीबद्ध किया है; यह जीवाणुओं की 12 प्रजातियों/परिवारों की सूची है जो मानव स्वास्थ्य के लिये सर्वाधिक खतरा उत्पन्न करती हैं।
  - MVU मॉडल रोगाणुरोधी प्रतिरोध की समस्या को कम करेगा और यह WHO की वैश्विक कार्य योजना द्वारा निर्धारित 'वन हेल्थ विज़न' (One Health Vision) के अनुरूप है।
- पशुधन के लिये MVUs: पशुधन स्वास्थ्य एवं रोग नियंत्रण योजना में प्रति एक लाख पशुओं पर एक MVU की परिकल्पना की गई है हालाँकि दुर्गम इलाकों में प्रयुक्त गाड़ियों की संख्या अधिक भी हो सकती है।
  - MVUs की उपलब्धता पर्याप्त संख्या में सुनिश्चित की जानी चाहिये (यहाँ तक कि दुर्गम क्षेत्रों में भी) ताकि भौगोलिक स्थिति बेहतर पशु चिकित्सा सेवाओं की पहुँच में बाधा न बने।
  - निजी क्षेत्र की भागीदारी: पशु स्वास्थ्य और MVUs के संदर्भ में निजी क्षेत्र द्वारा नवाचारों और हस्तक्षेप के पर्याप्त अवसर मौजूद हैं।
  - कोविड-19 महामारी के दौरान लगे लॉकडाउन के समय स्टार्टअप कंपनियों के नवाचार देखने को मिले। पशुपालक किसानों एवं पशु चिकित्सकों के मध्य वीडियो परामर्श सत्र के आयोजन हुए, साथ ही मोबाइल ऐप के माध्यम से पशुधन स्वास्थ्य एवं पोषण पर किसानों को विस्तृत जानकारी उपलब्ध कराई गई।
  - इसके अतिरिक्त सार्वजनिक-निजी भागीदारी (PPP) मॉडल के बढ़ते चलन के साथ MVU मॉडल निवेश पर उच्च रिटर्न का सृजन किया जा सकता है।

अर्थव्यवस्था और अनौपचारिकता

संदर्भ

पिछले कुछ वर्षों में भारत सरकार ने वस्तु एवं सेवा कर (GST), वित्तीय लेनदेन के डिजिटलीकरण और ई-श्रम (E-Shram) जैसे सरकारी पोर्टलों पर अनौपचारिक क्षेत्र के श्रमिकों के नामांकन जैसे कदमों के माध्यम से भारतीय अर्थव्यवस्था को औपचारिक रूप देने के कई प्रयास किये हैं।

औपचारिकरण (Formalization) के इन सुविचारित प्रयासों के बावजूद भारत के लिये अनौपचारिकरण की चुनौती बनी हुई है। कोरोना वायरस महामारी ने इस चुनौती को और बढ़ा दिया है।

रोज़गार सुरक्षा का अभाव, सामाजिक सुरक्षा लाभों का अभाव, कर चोरी—ये सभी विषय अनौपचारिक क्षेत्र (Informal Sector) के तीव्र लेकिन संवहनीय गति से औपचारिकरण की आवश्यकता की ओर इंगित करते हैं। अर्थव्यवस्था के औपचारिकरण में नीतिगत हस्तक्षेप, वित्तीय सहायता, शिक्षा और कौशल विकास की प्रमुख भूमिका होती है।

अनौपचारिक क्षेत्र और औपचारिकरण

- भारत में अनौपचारिक अर्थव्यवस्था: एक अनौपचारिक अर्थव्यवस्था उन उद्यमों का प्रतिनिधित्व करती है जो पंजीकृत नहीं होते और जहाँ नियोक्ता कर्मचारियों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान नहीं करते।
  - भारत सहित विकासशील विश्व के कई भागों में अनौपचारिकता में अत्यंत धीमी गति से कमी आई है, जो गरीबी और बेरोज़गारी के रूप में सबसे अधिक स्पष्ट रूप से प्रकट होती है।
  - पिछले दो दशकों में तेज़ आर्थिक विकास के बावजूद भारत में 90% श्रमिक अनौपचारिक रूप से ही नियोजित बने रहे हैं, जबकि वे सकल घरेलू उत्पाद के लगभग आधे भाग का उत्पादन करते हैं।
  - आधिकारिक आवधिक श्रम बल सर्वेक्षण (Periodic Labor Force Survey) के आँकड़ों से पता चलता है कि 75% अनौपचारिक कामगार स्व-नियोजित और आकस्मिक वेतन भोगी हैं जिनकी औसत आय नियमित वेतनभोगी कामगारों की तुलना में कम है।
    - भारत की आधिकारिक परिभाषा (जहाँ EPF जैसे कम-से-कम एक सामाजिक सुरक्षा लाभ प्रदान करने वाली नौकरी को औपचारिक नौकरी माना गया है) के साथ ILO की व्यापक रूप से सहमत परिभाषा को संयुक्त करें तो भारत में औपचारिक श्रमिकों की हिस्सेदारी केवल 9.7% (47.5 मिलियन) है।
- औपचारिक-अनौपचारिक लिंकेज: भारत में राजकोषीय परिप्रेक्ष्य 1980 के दशक के मध्य में शुरू किये गए कर सुधारों तक सीमित है।
  - आरंभ में रोज़गार को बढ़ावा देने के प्रयास में भारत सरकार ने श्रम गहन विनिर्माण में संलग्न छोटे उद्यमों को राजकोषीय रियायतें प्रदान कर और लाइसेंस के माध्यम से बड़े उद्योगों को विनियमित कर संरक्षित किया।
  - हालाँकि इस तरह के उपायों के कारण कई श्रम प्रधान उद्योग अनौपचारिक/असंगठित क्षेत्रों में विभाजित हो गए।

औपचारिकरण की आवश्यकता:

- औपचारिक क्षेत्र अनौपचारिक क्षेत्र की तुलना में अधिक उत्पादक हैं और औपचारिक श्रमिक सामाजिक सुरक्षा लाभों तक पहुँच रखते हैं।
- कुल रोज़गार में अनौपचारिक रोज़गार के एक उच्च अंश की उपस्थिति पर्याप्त वृद्धि की कमी या अल्प-विकास की निरंतरता का प्रतिनिधित्व करती है।
- 'ऑक्सफैम' की नवीनतम वैश्विक रिपोर्ट के अनुसार, वर्ष 2020 में अपनी नौकरी गंवाने वाले कुल 122 मिलियन लोगों में से 75% अनौपचारिक क्षेत्र से संलग्न थे। यह कमज़ोर अनौपचारिक क्षेत्र को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने की आवश्यकता को प्रकट करता है।
- चूँकि अनौपचारिक अर्थव्यवस्था के कारोबार प्रत्यक्ष रूप से विनियमित नहीं होते हैं, वे आम तौर पर नियामक ढाँचे से आय और व्यय छुपाकर एक या अधिक कर की अदायगी से बचते हैं।
  - यह सरकार के लिये चुनौतीपूर्ण है क्योंकि अर्थव्यवस्था का एक बड़ा हिस्सा कर के दायरे से बाहर रह जाता है।

औपचारिकरण की चुनौतियाँ

- निस्संदेह, करदाताओं की संख्या को बढ़ाना और कर चोरी को कम करना आवश्यक है। हालाँकि वैश्विक अनुभव बताते हैं कि कानूनी और नियामक बाधाएँ औपचारिकरण के मार्ग की सर्वप्रमुख बाधाएँ हैं।
- भारतीय स्टेट बैंक (SBI) द्वारा हाल ही में जारी 'इकोरैप' (Ecowrap) रिपोर्ट से पता चलता है कि समग्र अर्थव्यवस्था में अनौपचारिक क्षेत्र की हिस्सेदारी वर्ष 2017-18 में 52% से घटकर वर्तमान में 15-20% रह गई है।
  - हालाँकि ये निष्कर्ष अनौपचारिक क्षेत्र से औपचारिक क्षेत्र में एक निरंतर संरचनात्मक परिवर्तन का प्रतिनिधित्व नहीं करते हैं, बल्कि वर्ष 2020 और वर्ष 2021 में लागू गंभीर लॉकडाउन के अस्थायी परिणाम को प्रकट करते हैं।

- कानूनी और नियामक बाधाओं को दूर कर अनौपचारिक क्षेत्र को औपचारिकता के दायरे में लाने पर लक्षित नीतिगत प्रयास प्रशंसनीय हैं।
  - हालाँकि ये पहल इस बात को समझने में विफल हैं कि अनौपचारिक इकाइयों और उनके श्रमिकों का एक बड़ा हिस्सा अनिवार्य रूप से छोटे उत्पादकों (स्व-रोज़गार में संलग्न और आकस्मिक श्रमिक) का है जो न्यूनतम संसाधनों से अपना निर्वाह कर रहे हैं। इसलिये, इन प्रयासों के सीमित परिणाम ही प्राप्त होंगे।
- ई-श्रम पोर्टल पर श्रमिकों का पंजीकरण नौकरियों के औपचारिकरण का कोई संकेतक नहीं होगा जब तक कि श्रमिक पोर्टल पर सूचीबद्ध सभी सामाजिक सुरक्षा लाभ प्राप्त करने में सक्षम नहीं होंगे।
  - आधिकारिक रिकॉर्ड में डिजिटलीकरण और पंजीकरण बढ़ाना किसी भी उद्यम को औपचारिक रूप में वर्गीकृत करने के लिये न तो आवश्यक शर्त है और न ही इसे पर्याप्त माना जा सकता है।

आगे की राह

- सरल नियामक ढाँचा: अनौपचारिक क्षेत्र का औपचारिक क्षेत्र में ट्रांज़ीशन तभी हो सकता है जब अनौपचारिक क्षेत्र को नियामक अनुपालन के बोझ से राहत दी जाए और उसे आधुनिक, डिजिटल औपचारिक प्रणाली के साथ समायोजित होने के लिये पर्याप्त समय दिया जाए।
  - माना जाता है कि पंजीकरण प्रक्रियाओं को सरल बनाने, व्यापार संचालन नियमों को आसान बनाने और औपचारिक क्षेत्र के श्रमिकों के सुरक्षा मानकों को नीचे लाने से अनौपचारिक उद्यमों और उनके श्रमिकों को औपचारिकता के दायरे में लाया जा सकेगा।
- शिक्षा, निवेश और कौशल: अनौपचारिकता का निरंतर प्रभुत्व अल्प-विकास की स्थिति को प्रकट करता है। अर्थव्यवस्था का औपचारिकरण होगा और राष्ट्र विकास के मार्ग पर बढ़ेगा जब अनौपचारिक उद्यम अधिक पूंजी निवेश एवं शिक्षा के स्तर में वृद्धि के साथ अधिक उत्पादक बनेंगे और जब श्रमिकों को कौशल प्रदान किया जाएगा।
- MSMEs को सुदृढ़ करना: अनौपचारिक कार्यबल का लगभग 40% MSMEs में संलग्न है। इसलिये, यह स्वाभाविक है कि MSMEs के सुदृढ़ होने से आर्थिक सुधार, रोज़गार सृजन और अर्थव्यवस्था के औपचारिकरण के परिणाम प्राप्त होंगे।
- औपचारिकरण के लिये वित्तीय सहायता: छोटे उद्योगों को अपने पैरों पर खड़ा करने मंत मदद करने के लिये वित्तीय सहायता देना उन्हें संगठित क्षेत्र में लाने की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम होगा।
- मुद्रा ऋण (MUDRA loans) और स्टार्ट-अप इंडिया जैसी योजनाएँ युवाओं को संगठित क्षेत्र में अपनी जगह बनाने में मदद कर रही हैं।

फार्मास्यूटिकल क्षेत्र को बढ़ावा

संदर्भ

भारतीय दवा उद्योग अपनी सस्ती और उच्च गुणवत्तापूर्ण जेनेरिक दवाओं के माध्यम से वैश्विक स्वास्थ्य में सुधार लाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। हालाँकि मूल्य के संदर्भ में दुनिया के सबसे बड़े फार्मास्यूटिकल उत्पादकों में से एक बनने के लिये भारतीय दवा उद्योग को अभी भी R&D, पर्याप्त वित्तपोषण, दवाओं के लिये कच्चे माल के घरेलू विनिर्माण आदि विषयों में विभिन्न चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। उन्नत चिकित्सा और बायोफार्मा उत्पादों के क्षेत्र में भारत की प्रगति के लिये सरकार को राजकोषीय प्रोत्साहन और सक्षम नीतियाँ प्रदान कर एक अन्वेषण-उन्मुख और विज्ञान-संचालित दृष्टिकोण की ओर आगे बढ़ने के लिये प्रोत्साहन देने की आवश्यकता है। इसके साथ ही आवश्यक आधारभूत संरचना का भी विकास किया जाना चाहिये जो नवाचार को प्रेरित करने और भारतीय फार्मा एवं बायोफार्मा उद्योग को विश्व में उपयुक्त स्थान दिलाने के लिये विज्ञान और प्रौद्योगिकी क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण प्रगति का समर्थन करे।

भारत का फार्मा क्षेत्र

- 'वैश्विक दवाखाना': भारत विश्व का तीसरा सबसे बड़ा दवा उत्पादक है और वैश्विक स्तर पर जेनेरिक दवाओं का सबसे बड़ा प्रदाता है। इसे 'वैश्विक दवाखाना' (Pharmacy to the world) के रूप में जाना जाता है।
  - भारतीय दवा उद्योग विभिन्न टीकों की वैश्विक मांग के 50%, यू.एस. में जेनेरिक दवाओं की मांग के 40% और यू.के. में सभी दवाओं की मांग के 25% की पूर्ति करता है।

- वर्तमान में एड्स (AIDS- Acquired Immune Deficiency Syndrome) से मुकाबले के लिये वैश्विक स्तर पर उपयोग की जाने वाली 80% से अधिक एंटीरेट्रोवाइरल दवाओं (Antiretroviral Drugs) की आपूर्ति भारतीय दवा फर्मों द्वारा की जाती है।

- अर्थव्यवस्था में हिस्सेदारी: भारतीय फार्मास्यूटिकल उद्योग देश के लिये एक रणनीतिक उद्योग है, जो बड़े पैमाने पर लाभ प्रदान करता है। उल्लेखनीय है कि वर्ष 2019-20 में 37 बिलियन डॉलर मूल्य के साथ इसने GDP में प्रत्यक्ष रूप से 1.5% का योगदान दिया जबकि अप्रत्यक्ष रूप से 3% का योगदान दिया।
  - इस उद्योग की वैश्विक पहुँच भी है और यह वार्षिक रूप से 10 बिलियन डॉलर से अधिक का शुद्ध विदेशी मुद्रा अर्जक है।
- वैश्विक हिस्सेदारी में प्रगति: वर्ष 1969 में भारतीय फार्मास्यूटिकल्स भारतीय बाज़ार में महज 5% हिस्सेदारी रखते थे जबकि शेष 95% हिस्सेदारी वैश्विक फार्मा की थी। वर्ष 2020 तक यह परिदृश्य बदल गया जहाँ भारतीय फार्मा की हिस्सेदारी लगभग 85% और वैश्विक फार्मा की हिस्सेदारी 15% थी।
  - भारत वैश्विक जेनेरिक बाज़ार में मूल्य के हिसाब से पहले से ही 20% से अधिक का योगदान दे रहा है, जहाँ भारतीय उत्पाद अमेरिकी दवाओं के 40% (मात्रा के अनुसार) का योगदान करते हैं।

चुनौतियाँ:

- जटिल औषध विकास प्रक्रिया: नए, अत्याधुनिक उपचार का विकास करना एक जटिल और लंबी प्रक्रिया है।
  - वैज्ञानिक, तकनीकी और नियामक सीमितताएँ अत्यंत उच्च हैं जो औषध विकास को कठिन, अधिक समय लेने वाला और बहुत महँगा बनाते हैं।
- R&D पर निम्न व्यय: अनुसंधान और विकास (R&D) पर भारत का वर्तमान सार्वजनिक व्यय उसके सकल घरेलू उत्पाद के 1% से भी कम है। इसकी तुलना में अन्य 'ब्रिक्स' देश, चीन, ब्राज़ील और रूस क्रमश: अपने सकल घरेलू उत्पाद का 2.1%, 1.3% और 1% से कुछ अधिक खर्च करते हैं।
  - इसके अलावा, भारत में वर्ष 2018-19 में R&D प्रोत्साहन कुल कर प्रोत्साहन का मात्र 7.5% था, जबकि फार्मा के लिये यह इसका मात्र 2.3% था।
- वित्तपोषण की कमी: कई सरकारी साधनों की उपलब्धता के बावजूद पर्याप्त वित्तपोषण तक पहुँच में असमर्थता के कारण उद्यमियों की कई शानदार योजनाएँ प्राय: साकार नहीं हो पातीं।
- चीन पर अत्यधिक निर्भरता: कई देशों को उच्च गुणवत्तायुक्त दवाओं का एक प्रमुख आपूर्तिकर्ता होने के बावजूद भारतीय दवा उद्योग संबंधित कच्चे माल, अर्थात सक्रिय दवा सामग्री (Active Pharmaceutical Ingredients- APIs) के लिये चीन पर अत्यधिक निर्भर है।
  - भारतीय दवा निर्माता अपनी कुल थोक दवा सामग्री आवश्यकताओं का लगभग 70% चीन से आयात के माध्यम से पूरा करते हैं।
- मूल्य सीमा: भारतीय दवा उद्योग को सरकार और नागरिक समाज दोनों की ओर से दबाव का सामना करना पड़ता है कि देश की आबादी के एक बड़े हिस्से के लिये वे जेनेरिक दवाओं को अधिकाधिक किफायती बनाए रखें, जबकि उल्लेखनीय है कि भारत में दवा के मूल्य पहले से ही विश्व में सबसे कम हैं।
  - जेनेरिक दवाओं के कम मूल्य पर अधिकाधिक बल दवा कंपनियों के शुद्ध मुनाफे पर असर डालता है।

आगे की राह

- ग्लोबल बास्केट में मूल्य हिस्सेदारी की वृद्धि करना: मात्रा हिस्सेदारी (Volume Share) के अलावा भारत को अब मूल्य हिस्सेदारी (Value Share) पर भी पकड़ बनाने की ज़रूरत है। फार्मा मूल्य शृंखला को आगे बढ़ाने के लिये उसे नए बायोलॉजिक्स, बायोसिमिलर्स, mRNA व अन्य नई पीढ़ी के टीकों, ओर्फन ड्रग्स, एंटीमाइक्रोबियल्स, प्रीसिज़न मेडिसिन, सेल एवं जीन थेरेपी जैसे उभरते हुए अवसरों पर ध्यान केंद्रित करने की आवश्यकता है।
- मूल्य संदर्भ में शीर्ष पाँच देशों में स्थान पाने और मात्रा के संदर्भ में पहला स्थान बनाने के लिये भारतीय फार्मा उद्योग को वर्तमान में 44 बिलियन डॉलर से वर्ष 2030 तक 120-130 बिलियन डॉलर और वर्ष 2047 तक 500 बिलियन डॉलर तक करने की आवश्यकता होगी।

- R&D निवेश को बढ़ावा देना: अध्ययनों से पता चलता है कि अनुसंधान एवं विकास निवेश में औसतन 1% की वृद्धि से उत्पादन में 0.05- 0.15% तक की वृद्धि होती है।
  - भारत को वैश्विक फार्मास्यूटिकल इनोवेशन हब बनने के लिये अनुसंधान एवं विकास, विनिर्माण और डिजिटल रूपांतरण में घातीय निवेश करने की आवश्यकता होगी।
  - सरकार को R&D में निवेश को प्रोत्साहित करने और उद्योग की मदद कर सकने वाले विभिन्न वित्तपोषण तंत्रों का मूल्यांकन करने के लिये तत्काल एक व्यवस्था का निर्माण करना होगा। वित्त वर्ष 2022-23 का बजट फार्मा उद्योग को आवश्यक प्रोत्साहन प्रदान कर सकने के लिये एक अच्छा अवसर हो सकता है।
  - अनुसंधान-संबद्ध प्रोत्साहन (Research-linked incentives- RLIs) इस उद्योग को R&D निवेश में वृद्धि के लिये प्रोत्साहन प्रदान कर सकने के साथ ही इसे सह-नवाचार के लिये शिक्षा जगत के साथ अत्यंत आवश्यक संलग्नता निर्माण हेतु प्रेरित कर सकते हैं।
- लक्षित वित्तीय प्रोत्साहन: उत्पादन वृद्धि के लिये सरकार को डायग्नोस्टिक किट एवं अन्य चिकित्सा उपकरणों के निर्माण को बढ़ावा देने के उद्देश्य से लक्षित वित्तीय प्रोत्साहन शुरू करना चाहिये, विशेष रूप से यह देखते हुए कि इन साधनों के विनिर्माण के लिये आवश्यक कच्चे माल हेतु आयात पर अत्यधिक निर्भरता बनी हुई है।
  - यह APIs विनिर्माण का एक बड़ा हिस्सा भारत में वापस लाने का भी एक अवसर है ताकि देश महत्त्वपूर्ण इनपुट्स के लिये आयात पर निर्भर न हो।
- बेहतर दवा मूल्य निर्धारण नीति: भारतीय फार्मा उद्योग अब बड़े पैमाने पर विभिन्न चिकित्सीय स्थितियों के उपचार के लिये नए अणु विकसित करने की कगार पर है।
  - चूँकि नई दवाओं के विकास पर धन खर्च होता है, सरकार को ऐसी शर्तें सुनिश्चित करनी होगी कि नए अणुओं में निवेश पर पर्याप्त लाभ प्राप्त हो, जबकि भारत और विश्व के लिये नई दवाओं के उत्पादन के लिये दवा फर्म उत्तरदायी भी बने रहें।
  - एक ऐसे समय जब भारतीय दवा की कीमतें पहले से ही विश्व में सबसे कम हैं, आवश्यकता है कि दवा मूल्य निर्धारण नीति को सुसंगत बनाया जाए ताकि नए अणुओं में निवेश के लिये अधिशेष का सृजन हो, जबकि सस्ती स्वास्थ्य सेवा प्रदान करने हेतु मूल्य स्तर उपयुक्त भी बने रहें।

नोट :

अंतर्राष्ट्रीय घटनाक्रम

परिवर्तित विश्व व्यवस्था में भारत

संदर्भ

यह एडिटोरियल 18/01/2022 को 'द हिंदू' में प्रकाशित "India's Watchwords In A Not So Bright 2022" लेख पर आधारित है। इसमें विश्व की बदलती भू-राजनीतिक गतिशीलता और विभिन्न देशों के साथ अपने संबंधों को संतुलित करने के लिये भारत द्वारा संभावित दृष्टिकोण के संबंध में चर्चा की गई है। वर्ष 2020 और 2021 में वैश्विक स्तर पर कई परिवर्तनकारी घटनाएँ देखने को मिली। इनमें से हिंद-प्रशांत क्षेत्र की भू-राजनीति में सबसे अधिक परिवर्तन नज़र आया जो विभिन्न गति और स्तरों पर लगातार परिवर्तित हो रही है। परिदृश्य यह है कि आगामी वर्ष में भी एक नियम आधारित अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था की स्थापना दूरस्थ संभावना ही है। इसके बजाय वैश्विक मामलों में अनिश्चितता और अस्थिरता के ही प्रमुख पहलू बने रहने की संभावना है। भारत के लिये रणनीतिक रूप से महत्त्वपूर्ण भू-भागों में जारी आंतरिक संघर्ष और भारत एवं चीन के बीच चल रहे गतिरोध के मध्य भारत के लिये सही दृष्टिकोण यह होगा कि चीन के विरुद्ध पहले से मौजूद समूहों और उत्कृष्ट द्विपक्षीय संबंधों का लाभ उठाने के साथ-साथ अपने राजनयिक दृष्टिकोण में अधिक लचीलापन लेकर आए।

बदलती विश्व व्यवस्था की चुनौतियाँ

- अधिनायकवाद का उदय: निश्चय ही हाल के वर्षों में विश्व के कई देशों में अधिनायकवाद का उदय हुआ है। हालाँकि इसे एक नई परिघटना के रूप में शायद ही देखा जा सकता है।
  - चीन ने 'एक देश, दो प्रणाली' (One Country Two Systems) की नीति का परित्याग कर दिया है और हॉन्गकॉन्ग की स्वतंत्रता का हनन है जिसकी अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी निंदा की जा रही है।
    - इसके अलावा शिनजियांग में उइगर मुसलमानों के मानवाधिकारों का उल्लंघन और ताइवान के प्रति चीन की आक्रामक मुद्रा संघर्ष के प्रमुख कारण के रूप में उभर सकते हैं।
  - वर्ष 2022 में युद्ध का एक दूसरा प्रमुख कारण रूस और यूक्रेन के मध्य जारी संघर्ष हो रहा है, जहाँ यूक्रेन को अमेरिका और उत्तरी अटलांटिक संधि संगठन (NATO) का समर्थन प्राप्त है।
    - कज़ाखस्तान में वर्तमान अशांति एक ऐसे विश्व के लिये जोखिम उत्पन्न कर रही है जो पहले ही इथियोपिया, लीबिया और पश्चिम एशिया एवं उत्तरी अफ्रीका के कुछ क्षेत्रों में तख्तापलट या आंतरिक संघर्ष की विभिन्न घटनाओं से ग्रसित है।
  - अफगानिस्तान में तालिबान की सत्ता में पुन:वापसी ने भारत को परिधि पर पहले से हीअशांत भूभाग में शक्ति संतुलन में एक भौतिक परिवर्तन उत्पन्न कर दिया है।
    - अफगानिस्तान के घटनाक्रम ने संपूर्ण क्षेत्र में कई 'राज्य विरोधी उग्रवादी समूहों' की महत्त्वाकांक्षाओं को हवा दी है।
  - इन चिंताओं के साथ ही नए साक्ष्य प्राप्त हो रहे हैं जिनसे भारत के पूर्वी हिस्से में (इंडोनेशिया) में कट्टरपंथी इस्लामी गतिविधियों का पुनरुत्थान हो रहा है।
- चीनी प्रभुत्व का विस्तार: चीन की भूमिका संभवत: सबसे अधिक विघटनकारी है, क्योंकि मौजूदा अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था के लिये यह एक प्रमुख चुनौती पेश करता है।
  - हाइपर-सोनिक प्रौद्योगिकी जैसे 'अत्याधुनिक हथियार' के साथ चीन सैन्य रूप से कई क्षेत्रों में अमेरिकी वर्चस्व को खुले तौर पर चुनौती दे रहा है।
  - हाल में चीन के आर्थिक परिदृश्य में आई गिरावट भी वर्ष 2022 में एशिया-प्रशांत क्षेत्र में नए तनावों को जन्म दे सकती है।
  - इसके अलावा 'बेल्ट एंड रोड इनिशिएटिव' (BRI) के माध्यम से चीन की विस्तारवादी नीतियों को भी अमेरिका, यूरोपीय संघ, G7 देशों जैसी वैश्विक शक्तियों के साथ ही भारत द्वारा एक खतरे के रूप में देखा जा रहा है।

- भारत के सीमा संबंधी मुद्दे: पाकिस्तान और चीन की ओर से दो मोर्चों पर लगातार खतरे ने भारत की सुरक्षा के एक कठिन महाद्वीपीय आयाम के लिये मंच तैयार किया है। पाकिस्तान और चीन की सीमाओं पर सैन्यीकरण लगातार वृद्धि हुई है।
  - लद्दाख के विभिन्न सेक्टरों में वास्तविक नियंत्रण रेखा (Line of Actual Control) के उल्लंघन की घटनाएँ वर्ष 2022 में भी जारी रह सकती हैं।
  - इस प्रकार लद्दाख या किसी अन्य विवादित क्षेत्र में इस वर्ष भी तनाव में कमी आने की संभावना नहीं है।
- पश्चिम और मध्य एशिया में भारत के लिये चुनौतियाँ: मध्य एशिया में भारत के समक्ष प्रमुख चुनौती रूस के साथ पारंपरिक मित्रता के सर्वोत्कृष्ट प्रबंधन की होगी जबकि हाल में अधिक मुखर झुकाव भारत-अमेरिका संबंधों की ओर रहा है।
  - पश्चिम एशिया में भारत के लिये चुनौती यह है कि इस क्षेत्र में विभिन्न देशों/समूहों के परस्पर विरोधी हितों के बीच दूसरे क्वाड (भारत, इज़राइल, संयुक्त अरब अमीरात और अमेरिका) की अपनी सदस्यता का प्रबंधन वह कैसे करे।
  - दोनों ही भू-भागों में मौजूदा परिदृश्य का प्रबंधन कर सकने में भारतीय कूटनीति की कड़ी परीक्षा होगी।

आगे की राह

- भारत की विदेश नीति में लचीलापन: भारत और भारत की विदेश नीति को विद्यमान अंतर्विरोधों को प्रबंधित करने में अधिक लचीलेपन का प्रदर्शन करने की आवश्यकता है।
  - यह महत्त्वपूर्ण है कि भारत उन समस्याओं का तर्कसंगत उत्तर ढूंढे, जिन्हें वह अधिक समय तक ठंडे बस्ते में नहीं रख सकता।
  - भारत को संज्ञानात्मक पूर्वाग्रह के कारण उत्पन्न होने वाले 'ब्लाइंड स्पॉट्स' से बचना चाहिये और संकेतों को ठीक से पढ़ने के प्रति सचेत होना चाहिये।
  - भारत के नेताओं और राजनयिकों को न केवल मौजूदा खतरों का जायजा लेना चाहिये बल्कि जो जोखिम साफ हैं उनके प्रबंधन के तरीकों को लेकर भी तैयार रहना चाहिये।
- चीन की सैन्य शक्ति का मुकाबला करना: भारत को तय करना होगा कि चीन की युद्ध भड़काने वाली गतिविधियों पर सर्वश्रेष्ठ प्रतिक्रिया किस प्रकार दी जाए।
  - भारत को अपनी सैन्य मुद्रा को सशक्त करने की आवश्यकता होगी, जो चीन का मुकाबला करने का एक साधन तो होगा ही, पड़ोसी देशों को यह भरोसा दिलाने का माध्यम भी होगा कि वह चीन का मुकाबला कर सकने में सक्षम है।
  - इसके साथ ही भारत को हिंद महासागर क्षेत्र में चीन के नौसैनिक बल प्रक्षेपण को रोकने पर भी ध्यान देना चाहिये। बुद्धि और शक्ति की लड़ाई में बहुत कुछ इस बात पर निर्भर करेगा कि भारत इस स्थिति पर किस प्रकार प्रतिक्रिया देता है।
- द्विपक्षीय/बहुपक्षीय संबंधों का लाभ उठाना: भारत को वह करना चाहिये जो चीन नहीं कर सकता अर्थात क्षेत्रीय संपर्क का निर्माण, पड़ोसी देशों के लिये अपने बाज़ार, स्कूल एवं सेवाओं के द्वार खोल देना और उपमहाद्वीप में आर्थिक एवं राजनीतिक स्थिरता के एक स्रोत के रूप में स्वयं को सबल करना।
  - क्वाड जैसी साझेदारी का भी विस्तार किया जा सकता है और इसमें सिंगापुर, इंडोनेशिया और वियतनाम को शामिल किया जा सकता है। यह निश्चित रूप से हिंद-प्रशांत क्षेत्र में चीन का मुकाबला करने की भारत की क्षमता को मज़बूत करेगा।
  - अफ्रीका के पूर्वी एवं दक्षिणी क्षेत्रों और हिंद महासागर के द्वीप राज्यों को निरंतर उच्च नीतिगत ध्यान और वित्तीय संसाधनों की आवश्यकता है।
    - एक स्पष्ट आर्थिक और व्यापारिक एजेंडा (इन महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों में कॉर्पोरेट भारत को संलग्न और प्रोत्साहित करते हुए) निश्चित रूप से दीर्घकालिक लाभांश प्रदान कर सकता है।
- यूरोपीय संघ और आसियान की भूमिका: यूरोपीय संघ की हिंद-प्रशांत रणनीति इस क्षेत्र में अपनी आर्थिक और सुरक्षा प्रोफ़ाइल की वृद्धि करने और इसके साथ संलग्नता बढ़ाने पर लक्षित है। चीन के प्रति अधिक स्पष्टता एवं मुखरता और भारत जैसे भागीदारों के साथ अधिक सहयोग के माध्यम से यूरोपीय संघ (और यू.के.) हिंद-प्रशांत में महत्त्वपूर्ण देश के रूप में उभरने की उम्मीद कर सकते हैं।
  - आसियान देशों को चीन की आक्रामकता और तीव्र वृहत शक्ति प्रतिद्वंद्विता का सामना करना पड़ता है और इसलिये उन्हें सर्वाधिक कार्रवाई की आवश्यकता है। इस दृष्टिकोण से क्वाड शक्तियों द्वारा आसियान सरकारों के साथ बहुपक्षीय वार्ताओं का आयोजन आवश्यक है।
    - व्यक्तिगत स्तर पर भी भारत को इंडोनेशिया, वियतनाम, फिलीपींस और थाईलैंड जैसे प्रमुख दक्षिण-पूर्व एशियाई भागीदारों के साथ सहयोग बढ़ाना चाहिये।

निष्कर्ष

भारत ने महामारी के दौरान अपने मानवीय कर्तव्यों की पूर्ति में अच्छा प्रदर्शन किया है। अपनी परिधि में इन सद्भावनाओं को आर्थिक और रणनीतिक अवसरों में कुशलतापूर्वक बदल सकने की कला भारत को सीखनी होगी और यही वर्ष 2022 के लिये उसका केंद्रित कार्य होना चाहिये।

भारत-प्रशांत के लिये इंडो-जर्मन पार्टनरशिप

संदर्भ

जर्मनी ने भी समझ लिया है कि विश्व का राजनीतिक एवं आर्थिक गुरुत्वाकर्षण काफ़ी हद तक हिंद-प्रशांत क्षेत्र की ओर स्थानांतरित हो रहा है जहाँ भारत एक प्रमुख अभिकर्ता, रणनीतिक भागीदार और दीर्घकालिक लोकतांत्रिक मित्र के रूप में उपस्थिति दर्ज कराता है। हिंद-प्रशांत क्षेत्र में जापान, ऑस्ट्रेलिया, वियतनाम, सिंगापुर और अन्य कुछ देशों का दौरा करने के बाद जर्मन नौसेना फ्रिगेट 'बायर्न' (Bayern) हाल ही में मुंबई पहुँचा। सूक्ष्मता से देखें तो यह भारत-जर्मनी संबंधों के लिये एक उल्लेखनीय कदम को चिह्नित करता है। बायर्न का आगमन प्रकट करता है कि जर्मनी वर्ष 2020 में अपनाए गए हिंद-प्रशांत नीति दिशा-निर्देशों (Indo-Pacific Policy Guidelines) पर गंभीरता से आगे बढ़ रहा है।

भारत, जर्मनी और हिंद-प्रशांत क्षेत्र

- भारत-जर्मनी संबंध: भारत और जर्मनी के बीच के द्विपक्षीय संबंध साझा लोकतांत्रिक सिद्धांतों पर आधारित हैं। भारत द्वितीय विश्व युद्ध के बाद जर्मनी संघीय गणराज्य के साथ राजनयिक संबंध स्थापित करने वाले पहले देशों में से एक था।
  - जर्मनी भारत को विकास परियोजनाओं में प्रति वर्ष 1.3 बिलियन यूरो का सहयोग देता है, जिसमें से 90% जलवायु परिवर्तन से मुकाबले और प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा के साथ-साथ स्वच्छ एवं हरित ऊर्जा को बढ़ावा देने के उद्देश्य में काम आता है।
    - जर्मनी महाराष्ट्र में 125 मेगावाट क्षमता के एक विशाल सौर संयंत्र के निर्माण में भी सहयोग कर रहा है, जो 155,000 टन वार्षिक CO_2 उत्सर्जन की बचत करेगा।
  - दिसंबर 2021 में जर्मनी के नए चांसलर की नियुक्ति के बाद भारत और जर्मनी ने सहमति व्यक्त की है कि दुनिया के प्रमुख लोकतांत्रिक देशों और रणनीतिक भागीदारों के रूप में दोनों देश साझा चुनौतियों से निपटने के लिये आपसी सहयोग की वृद्धि करेंगे जहाँ जलवायु परिवर्तन उनके एजेंडे में शीर्ष विषय के रूप में शामिल होगा।
- आर्थिक सहयोग की चुनौती: वर्तमान में दोनों देशों के बीच एक पृथक द्विपक्षीय निवेश संधि का अभाव है। जर्मनी का भारत के साथ यूरोपीय संघ के माध्यम से द्विपक्षीय व्यापार एवं निवेश समझौता (Bilateral Trade and Investment Agreement- BTIA) कार्यान्वित है जहाँ उसके पास अलग से वार्ता कर सकने का अवसर नहीं है।
  - इसके अलावा जर्मनी विशेष रूप से भारत के व्यापार उदारीकरण उपायों को लेकर संदेह रखता है और अधिक उदार श्रम नियमों की अपेक्षा रखता है।
- हिंद-प्रशांत क्षेत्र का महत्त्व: हिंद-प्रशांत (जिसका केंद्र बिंदु भारत है) जर्मनी और यूरोपीय संघ की विदेश नीति में अधिकाधिक महत्त्वपूर्ण होता जा रहा है।
  - हिंद-प्रशांत क्षेत्र में वैश्विक आबादी के लगभग 65% का निवास है और विश्व के 33 मेगासिटीज़ में से 20 यहीं मौजूद हैं।
  - यह क्षेत्र वैश्विक सकल घरेलू उत्पाद में 62% और वैश्विक पण्य व्यापार में 46% की हिस्सेदारी रखता है।
  - यह क्षेत्र कुल वैश्विक कार्बन उत्सर्जन के आधे से अधिक भाग का उद्गम क्षेत्र भी है जो इस क्षेत्र के देशों को स्वाभाविक रूप से जलवायु परिवर्तन और संवहनीय ऊर्जा उत्पादन एवं उपभोग जैसी वैश्विक चुनौतियों से निपटने में प्रमुख भागीदार बनाता है।
- जर्मनी और हिंद-प्रशांत: जर्मनी नियम-आधारित अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था को सशक्त करने में अपने योगदान के लिये प्रतिबद्ध है।
  - जर्मनी के हिंद-प्रशांत दिशा-निर्देशों के अंतर्गत संलग्नता की वृद्धि और उद्देश्यों की पूर्ति के लिये भारत का उल्लेख किया गया है। अंतर्राष्ट्रीय सुरक्षा से संबंधित विषयों पर चर्चा में भारत अब एक महत्त्वपूर्ण संधि या नोड बन सकता है।
  - चूँकि भारत एक समुद्री महाशक्ति है और मुक्त एवं समावेशी व्यापार का मुखर समर्थक है, वह इस मिशन में जर्मनी (अंततः यूरोपीय संघ) का एक प्राथमिक भागीदार है।

आगे की राह

- भारत-जर्मनी संबंधों को मज़बूत करना: जलवायु परिवर्तन, खाद्य सुरक्षा, ऊर्जा और अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा सहित विभिन्न वैश्विक मुद्दों के समाधान के लिये जर्मनी भारत को एक महत्त्वपूर्ण भागीदार के रूप में देखता है।
  - इसके साथ ही जर्मनी में सत्ता में आई नई गठबंधन सरकार भारत के लिये दोनों देशों के बीच की रणनीतिक साझेदारी को मज़बूत करने का अवसर प्रदान कर रही है।
  - जर्मनी चीन का मुकाबला करने के लिये यूरोपीय संघ के माध्यम से कनेक्टिविटी परियोजनाओं को लागू करने का इच्छुक है। यह गठबंधन 'भारत-यूरोपीय संघ BTIA' के संपन्न होने की इच्छा रखता है और इसे संबंधों के विकास के लिये एक महत्त्वपूर्ण पहलू के रूप में देखता है।
- आर्थिक सहयोग का दायरा: भारत और जर्मनी को बौद्धिक संपदा दिशा-निर्देशों के सहकारी लक्ष्यों को साकार करना चाहिये और व्यवसायों को भी संलग्न करना चाहिये।
  - जर्मन कंपनियों को भारत में विनिर्माण केंद्र स्थापित करने के लिये उदारीकृत PLI योजना का लाभ उठाने के लिये प्रोत्साहित किया जाना चाहिये।
  - जर्मनी ने एक वैक्सीन उत्पादन प्रतिष्ठान के लिये अफ्रीका को 250 मिलियन यूरो का ऋण देने की प्रतिबद्धता जताई है। भारत के सहयोग से सुविधाहीन पूर्वी अफ्रीकी क्षेत्र में ऐसा प्रतिष्ठान स्थापित किया जा सकता है।
- हिंद-प्रशांत क्षेत्र में उत्तरदायित्वों की साझेदारी: भारत की ही तरह जर्मनी भी एक व्यापारिक राष्ट्र है। जर्मन व्यापार का 20% से अधिक हिंद-प्रशांत क्षेत्र में संपन्न होता है।
  - यही कारण है कि जर्मनी और भारत विश्व के इस हिस्से में स्थिरता, समृद्धि और स्वतंत्रता को बनाए रखने और उसका समर्थन करने का उत्तरदायित्व साझा करते हैं। एक स्वतंत्र और खुले हिंद-प्रशांत के समर्थन में भारत और यूरोप दोनों के महत्त्वपूर्ण हित निहित हैं।
- समन्वय का अवसर: जर्मनी मानता है कि भारत की सक्रिय भागीदारी के बिना किसी भी वैश्विक समस्या का समाधान संभव नहीं है।
  - वर्ष 2022 में जर्मनी G7 की अध्यक्षता ग्रहण करेगा और इसी वर्ष दिसंबर में भारत को G20 की अध्यक्षता प्राप्त होगी। इस प्रकार, यह संयुक्त और समन्वित कार्रवाई का एक अवसर प्रदान कर रहा है।
- सतत् विकास की ओर एक साथ: जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिये जर्मनी से सर्वाधिक वित्तीय सहायता भारत को ही प्रदान की जाती है।
  - ग्लासगो में आयोजित COP-26 में वैश्विक नेताओं के बीच जिस बात पर सहमति बनी थी, जर्मनी और भारत उसे व्यावहारिक रूप से लागू कर रहे हैं।
  - दोनों देश साथ मिलकर भारत के विकास के लिये एक संवहनीय पथ पर कार्य कर सकते हैं जिससे दोनों को लाभ होगा।

निष्कर्ष

- भारत और जर्मनी शांत जल और समुद्र दोनों में ही समान रूप से एक मज़बूत साझेदारी के लिये आगे बढ़ रहे हैं। दोनों देशों को संपूरकता के क्षेत्रों में और निकट संलग्नता के लिये नए सिरे से विचार करना चाहिये।

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी

क्वांटम प्रौद्योगिकी और भारत

संदर्भ

हाल के वर्षों में वैश्विक क्वांटम उद्योग ने अविश्वसनीय प्रगति की है और सरकारों एवं निजी क्षेत्र दोनों ही द्वारा इसमें भारी निवेश किया गया है। अमेरिका, फ्राँस, जर्मनी, चीन एवं रूस जैसे देश पिछले एक दशक से क्वांटम प्रौद्योगिकी में संसाधनों एवं मानव पूंजी का निवेश कर रहे हैं, लेकिन भारत अब तक पीछे ही रहा है और इस अंतराल को दूर करने तथा इस क्षेत्र में प्रमुखता हासिल करने के लिये उसे विशेष प्रयास और श्रम करना होगा।

यद्यपि क्वांटम प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भारत ने अधिक प्रगति नहीं की है, इस प्रकार बिना विलंब किये इस दिशा में तेज़ी से आगे बढ़ने की ज़रूरत है। प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में उन्नत देशों से बराबरी कर सकने की भारत की इच्छा 'राष्ट्रीय क्वांटम प्रौद्योगिकी एवं अनुप्रयोग मिशन' (National Mission for Quantum Technologies and Applications- NM-QTA) की घोषणा के रूप में प्रकट हुई है।

क्वांटम प्रौद्योगिकी

- परिचय: क्वांटम प्रौद्योगिकी क्वांटम यांत्रिकी (Quantum mechanics) के सिद्धांतों पर आधारित है जिसे 20वीं शताब्दी के आरंभ में परमाणुओं एवं मूल तत्वों के स्तर पर प्रकृति के वर्णन के लिये विकसित किया गया था।
  - इस क्रांतिकारी प्रौद्योगिकी के पहले चरण ने भौतिक जगत की समझ की नींव प्रदान की और लेज़र (lasers) और सेमीकंडक्टर ट्रांजिस्टर जैसे सर्वगत आविष्कारों को जन्म दिया।
  - दूसरी क्रांति वर्तमान में जारी है जो क्वांटम यांत्रिकी के गुणों को कंप्यूटिंग के क्षेत्र में प्रवेश कराने का लक्ष्य रखती है।
- भारत और चीन के बीच एक तुलना:
  - चीन में अनुसंधान एवं विकास: चीन ने क्वांटम प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अपना अनुसंधान एवं विकास (R&D) कार्य वर्ष 2008 में शुरू किया था।
    - वर्ष 2022 में परिदृश्य यह है की चीन विश्व का पहला क्वांटम उपग्रह विकसित करने, बीजिंग एवं शंघाई के बीच एक क्वांटम संचार लाइन का निर्माण करने और विश्व के दो सबसे तेज़ क्वांटम कंप्यूटरों का स्वामी होने का दावा रखता है।
    - यह एक दशक लंबे चले अनुसंधान का परिणाम है जिसे महत्त्वपूर्ण उपलब्धियाँ प्राप्त करने की इच्छा और आशा के साथ बल प्रदान किया गया था।
  - भारत की स्थिति: दूसरी ओर क्वांटम प्रौद्योगिकी भारत में ऐसा क्षेत्र रहा है जो दीर्घकालिक अनुसंधान एवं विकास पर अत्यधिक केंद्रित है।
    - वर्तमान में अनुसंधानकर्त्ताओं, औद्योगिकी पेशेवरों, शिक्षाविदों और उद्यमियों की एक सीमित संख्या ही इस क्षेत्र में सक्रिय है और अनुसंधान एवं विकास पर निरंतर ध्यान केंद्रित नहीं किया गया है।
- क्वांटम प्रौद्योगिकी और निजी क्षेत्र: गूगल, माइक्रोसॉफ्ट और IBM जैसे बड़े प्रौद्योगिकी निगमों के पास क्वांटम कंप्यूटिंग और इसके अनुप्रयोगों के लिये समर्पित कार्यक्रम हैं।
  - इसी तरह, QNu Labs, BosonQ और Qulabs.ai जैसी कई भारतीय स्टार्टअप कंपनियाँ भी क्रिप्टोग्राफी, कंप्यूटिंग तथा साइबर सुरक्षा के लिये क्वांटम-आधारित एप्लिकेशन विकसित करने की दिशा में उल्लेखनीय काम कर रही हैं।
- भारत की अन्य संबंधित पहलें:
  - वर्ष 2018 में विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग ने 'क्वांटम-सक्षम विज्ञान और प्रौद्योगिकी' (Quantum-Enabled Science & Technology- QuEST) नामक एक कार्यक्रम का अनावरण किया और अनुसंधान में तेज़ी लाने के लिये अगले तीन वर्षों में 80 करोड़ रुपए के निवेश की प्रतिबद्धता जताई।

- वर्ष 2020 के बजट संभाषण में भारत की वित्त मंत्री ने देश में क्वांटम उद्योग को सशक्त बनाने के लिये पाँच वर्षों में 8000 करोड़ रुपए के कुल परिव्यय के साथ राष्ट्रीय क्वांटम प्रौद्योगिकी एवं अनुप्रयोग मिशन (NM-QTA) की घोषणा की।
- अक्तूबर 2021 में सरकार ने सी-डॉट (C-DOT) के क्वांटम कम्युनिकेशन लैब का भी उद्घाटन किया और स्वदेशी रूप से विकसित 'क्वांटम की डिस्ट्रीब्यूशन' (Quantum Key Distribution- QKD) समाधान का अनावरण किया।

संबद्ध चुनौतियाँ

- विधायी प्रक्रियाओं में धीमी प्रगति: NM-QTA की घोषणा वर्ष 2020 के बजट संभाषण में की गई थी, लेकिन मिशन को अभी तक अनुमोदन प्राप्त नहीं हुआ है, न ही वित्त वर्ष 2020-21 के दौरान NM-QTA के तहत किसी धन का आवंटन, वितरण या उपयोग सुनिश्चित किया गया।
- NM-QTA में निजी क्षेत्र की सीमित भागीदारी: केंद्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्री के अनुसार NM-QTA के लिये अभी तक किसी भी निजी क्षेत्र के भागीदार की पहचान नहीं की गई है और राष्ट्रीय मिशन हेतु परामर्श के लिये सरकार के बाहर के किसी भी अभिकर्त्ता को संलग्न नहीं किया गया है।
  - सरकार को निजी कंपनियों द्वारा प्राप्त की गई उपलब्धियों को चिह्नित करना चाहिये।
- सुरक्षा संबंधी मुद्दे: क्वांटम कंप्यूटिंग का संचार और कंप्यूटर को सुरक्षित करने वाले क्रिप्टोग्राफिक एन्क्रिप्शन पर एक विघटनकारी प्रभाव पड़ सकता है।
  - यह सरकार के लिये एक चुनौती भी उत्पन्न कर सकता है क्योंकि यदि यह प्रौद्योगिकी गलत हाथों में चली जाती है तो सरकार के सभी आधिकारिक एवं गोपनीय डेटा के 'हैक' होने और दुरुपयोग किये जाने का खतरा उत्पन्न होगा।
- प्रौद्योगिकी संबंधी मुद्दे: क्वांटम सुपरपोजिशन के गुणों का अत्यधिक नियंत्रित तरीके से दोहन कर सकने में भी चुनौती निहित है। 'क्यूबिट्स' अत्यंत संवेदनशील होते हैं और यदि ठीक से नियंत्रित नहीं किये जाएँ तो अपना 'क्वांटमनेस' खो देते हैं।
  - इसके साथ ही उनका उपयोग कर सकने के लिये सामग्री, डिज़ाइन और इंजीनियरिंग के सावधानीपूर्वक चयन की आवश्यकता होती है।
  - इसके अतिरिक्त, सैद्धांतिक स्तर पर क्वांटम कंप्यूटरों के लिये एल्गोरिदम और एप्लीकेशन के सृजन की चुनौती मौजूद है।

आगे की राह

- बेहतर नीतिनिर्माण और विनियमन: अगले 10-15 वर्षों के लिये एक व्यापक रणनीति विकसित करने पर ध्यान केंद्रित किया जाना चाहिये। इस रणनीति को यह सुनिश्चित करना होगा कि संसाधनों का गलत आवंटन न हो और जो प्रयास किये जाएँ वे उन प्रमुख क्षेत्रों में केंद्रित हों जो आर्थिक एवं रणनीतिक दोनों लाभ प्रदान करें।
  - इसके अतिरिक्त, क्वांटम प्रौद्योगिकी के विकास में योगदान कर सकने वाले लोगों/समूहों/संस्थाओं पर उपयुक्त ध्यान देना सरकार की सर्वोच्च प्राथमिकता होनी चाहिये।
  - क्वांटम कंप्यूटिंग को व्यापक रूप से उपलब्ध कराने से पहले इसके लिये एक विनियामक ढाँचे का विकास कर लेना भी विवेकपूर्ण होगा जहाँ राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर इसके वैध उपयोग की सीमाओं को सुपरिभाषित रखा जाए।
- उत्कृष्टता केंद्र की स्थापना: अकादमिक संस्थानों के साथ-साथ सरकारी अनुसंधान संस्थानों में क्वांटम विज्ञान और प्रौद्योगिकी पर समर्पित 'उत्कृष्टता केंद्र' की स्थापना पर प्राथमिक ध्यान दिया जाना चाहिये।
  - भारत सरकार के अधिकांश परिव्यय को क्वांटम R&D में विशेषज्ञता रखने वाले ऐसे संस्थानों को दिया जाना चाहिये। यह दो तरह से लाभांश का भुगतान कर सकता है:
    - यह महत्त्वपूर्ण बौद्धिक संपदा (IP) अवसंरचना के निर्माण में मदद करेगा जिसका उपयोग देश के लाभ के लिये किया जा सकता है।
    - अनुसंधान एवं शिक्षा पर ध्यान केंद्रित करने से प्रतिभा पूल में भी सुधार होगा और यह घरेलू क्वांटम प्रौद्योगिकी कार्यबल को सबल करेगा।
- केंद्र-राज्य समन्वय: राज्य सरकारें निकट भविष्य में 'सेमीकंडक्टर फैब्स' (Semiconductor Fabs) स्थापित करने में अभिन्न भूमिका निभा सकती हैं; क्वांटम प्रौद्योगिकी इन घरेलू विनिर्माण सुविधाओं और इकाइयों से अत्यधिक लाभान्वित हो सकती है।

- केंद्र और राज्यों द्वारा 'क्वांटम इनोवेशन हब' की संयुक्त स्थापना से कुशलतापूर्वक प्रत्यक्ष निवेश पाने और देश में सुसंबद्ध क्वांटम अनुसंधान नेटवर्क का निर्माण करने में मदद मिल सकती है।
- केंद्र और राज्य सरकारों को स्थानीय प्रतिभाओं को शामिल करते हुए नवाचार को बढ़ावा देने और अंतर्राष्ट्रीय फर्मों को आकर्षित करने के लिये एक अनुकूल वित्तीय तथा कानूनी वातावरण का निर्माण करना चाहिये।

- निजी क्षेत्र की भागीदारी: क्वांटम प्रौद्योगिकी और अनुप्रयोगों को विकसित करने में संलग्न स्टार्टअप्स तथा बिग टेक निगमों की शक्ति का उपयोग किया जाना चाहिये।
  - जबकि अकादमिक संस्थान मुख्यत: अनुसंधान पक्ष से संलग्न हैं, क्वांटम टेक कॉर्पोरेशन और स्टार्टअप इस अनुसंधान का ऐसे अनुप्रयोगों या उत्पादों में रूपांतरण और व्यावसायीकरण करने के लिये महत्त्वपूर्ण हैं जो उपयोग किये जा सकते हैं।
  - अकादमिक संस्थानों और उद्योग के परस्पर संपर्क को सरकार द्वारा सुगम किया जाना चाहिये ताकि अनुसंधान को वास्तविक आवश्यकताओं के अनुप्रयोगों में रूपांतरित किया जा सके।
- अंतर्राष्ट्रीय सहयोग: क्वांटम मूल्य शृंखला अत्यधिक जटिल बनी हुई है और भारत के लिये एक सफल क्वांटम पारिस्थितिकी तंत्र के निर्माण के लिये आत्मनिर्भर बने रहना कठिन होगा।
  - क्वांटम प्रौद्योगिकी संबंधी परियोजनाओं पर संयुक्त प्रयास के लिये अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया, कनाडा, UK एवं अन्य देशों के साथ क्वांटम प्रौद्योगिकी समझौते भारत के लिये आधार का कार्य कर सकते हैं।
  - भारत क्वाड (Quad) और ब्रिक्स (BRICS) जैसे प्रमुख समूहों में अपने सहयोगियों के साथ भी संलग्नता बढ़ा सकता है।

निष्कर्ष

भारत सरकार ने देश में एक राष्ट्रीय मिशन आरंभ करने की अपनी योजना के माध्यम से क्वांटम प्रौद्योगिकियों के महत्त्व को स्वीकार करते हुए पहला कदम आगे बढ़ा दिया है। हालाँकि, अनुसंधान एवं विकास के क्षेत्र में और निजी क्षेत्र एवं अकादमिक क्षेत्र से सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करने के लिये अभी बहुत कुछ किये जाने की आवश्यकता है, जिसके लिये द्विपक्षीय एवं बहुपक्षीय भागीदारी का लाभ उठाया जा सकता है।

नवीकरणीय ऊर्जा: महत्त्व और संबद्ध समस्याएँ

संदर्भ

पारंपरिक ईंधन की तुलना में नवीकरणीय ऊर्जा पर यूरोप का अधिक ज़ोर देना वैश्विक खाद्य संकट का कारण बन सकता है। अगस्त 2021 से पश्चिमी यूरोप को नवीकरणीय ऊर्जा से संबद्ध समस्या का सामना करना पड़ा है जहाँ कभी पवन ऊर्जा के लिये पवन की गति कम पड़ी, तो कभी सौर ऊर्जा के लिये सूर्य का प्रकाश उपलब्ध नहीं हो सकी।

विश्व भर में कमोडिटी बाज़ार, मांग और आपूर्ति के संतुलन पर काम करते हैं; दोनों में से किसी में मामूली परिवर्तन भी कीमतों में तीव्र वृद्धि या गिरावट का कारण बन सकता है। प्राकृतिक गैस के लिये यूरोप की मांग में अचानक आई वृद्धि ने तरलीकृत प्राकृतिक गैस (Liquefied Natural Gas- LNG)—जिस रूप में वैश्विक स्तर पर गैस का कारोबार होता है, के मूल्यों में वृद्धि कर दी है।

'ऑस्ट्रेलियन कम्पटीशन एंड कंज़्यूमर कमीशन' द्वारा प्रकाशित LNG मूल्य, दीर्घकालिक औसत की तुलना में वर्तमान (जनवरी 2022) में लगभग चार गुना अधिक है। उल्लेखनीय है कि ऑस्ट्रेलिया विश्व के प्रमुख LNG निर्यातकों में से एक है।

नवीकरणीय ऊर्जा के लाभ

- संवहनीय: नवीकरणीय स्रोतों से उत्पन्न ऊर्जा स्वच्छ एवं हरित और अधिक संवहनीय होती है।
- रोज़गार के अवसर: नई प्रौद्योगिकी को शामिल करने का स्पष्ट अर्थ है देश की कामकाजी आबादी के लिये रोज़गार के अधिक अवसर उपलब्ध होंगे।
- बाज़ार आश्वासन: अर्थव्यवस्था के दृष्टिकोण से नवीकरणीय स्रोत बाज़ार और राजस्व आश्वासन प्रदान करते हैं, जो आश्वासन किसी अन्य संसाधन से प्राप्त नहीं होते।
- अक्षय स्रोत: सौर, पवन, भू-तापीय ऊर्जा स्रोत जैसे ऊर्जा के नवीकरणीय स्रोत प्रकृति में 'शाश्वत एवं अक्षय' (Perpetual and Non-Exhaustive) हैं।

हरित ऊर्जा अपनाने से संबद्ध समस्याएँ

- गरीब देशों के लिये अधिक चुनौतियाँ: उस परिदृश्य की कल्पना करें जब नवीकरणीय ऊर्जा समग्र उद्देश्य की पूर्ति में अक्षम हो और अमीर अर्थव्यवस्थाएँ इस कमी को पूरा करने हेतु गैस खरीद के लिये छीना-झपटी शुरू कर दें।
  - उदाहरण के लिये ब्रिटेन, स्पेन और जर्मनी जैसे देश बिजली की कमी को पूरा करने के लिये प्राकृतिक गैस पर अधिक निर्भर हैं, जिसके कारण इनकी कीमतों में वृद्धि हुई है।
  - गरीब देशों के लिये बढ़ी हुई कीमतों को वहन करने में सक्षम होना कठिन होगा।
- पारंपरिक ईंधन का महत्त्व:
  - प्राकृतिक गैस का उपयोग यूरिया के उत्पादन के लिये किया जाता है, इसलिये यदि गैस की कीमतें बढ़ती हैं तो उर्वरक भी महँगा हो जाता है। महँगे उर्वरक का अर्थ होगा अधिक महँगे खाद्य पदार्थ, जो गरीबों को व्यापक रूप से प्रभावित करेगा।
    - महँगे उर्वरक का प्रभाव कुछ माह बाद महसूस किया जाएगा, क्योंकि महँगे उर्वरक एवं निम्न उपज से खाद्य कीमतों में वृद्धि होगी।
    - भारत इससे अपेक्षाकृत कम प्रभावित होगा, क्योंकि देश के ऊर्जा मिश्रण में प्राकृतिक गैस की हिस्सेदारी कम है, लेकिन खाद्य पदार्थों की ऊँची कीमतों के कारण फिर भी इसे समस्याओं का सामना करना पड़ेगा।
    - खाद्य मुद्रास्फीति ऐसे समय उत्पन्न होगी जब जारी महामारी ने दुनिया भर में निम्न आय समूहों के लोगों को व्यापक रूप से प्रभावित किया है।
  - कच्चा तेल: वर्ष 2007-08 में, जब तेल की कीमतें अधिक थीं, अमेरिका और यूरोप के नेतृत्व में 'जैव ईंधन' का उपयोग करने पर ज़ोर दिया गया था। भूमि को उन फसलों की खेती की ओर मोड़ दिया गया था, जिन्हें इथेनॉल में परिवर्तित किया जा सके और इससे खाद्य फसलों के लिये भूमि क्षेत्र में कमी आई थी।
    - वर्ष 2008 के खाद्य मूल्य संकट के प्रभावों को दुनिया भर में, विशेष रूप से गरीबों द्वारा महसूस किया गया था। खाद्य पदार्थों की उच्च कीमत वर्ष 2011 में अरब जगत में राजनीतिक अशांति के प्रमुख कारणों में से एक थी। लीबिया और सीरिया आज भी इसके दुष्परिणामों के शिकार बने हुए हैं।
  - इस प्रकार, ऊर्जा के पारंपरिक स्रोतों को बुरा मानने एवं उनका उपयोग बंद करने, जबकि कम भरोसेमंद 'स्वच्छ' ऊर्जा की ओर आगे बढ़ने पर अंधाधुंध ज़ोर देने के कई प्रभाव उत्पन्न हो सकते हैं।
- स्थापना लागत की समस्या: स्थापना की उच्च प्रारंभिक लागत नवीकरणीय ऊर्जा के विकास की प्रमुख बाधाओं में से एक है। यद्यपि एक कोयला संयंत्र के विकास के लिये उच्च निवेश की आवश्यकता होती है, ज्ञात है कि पवन एवं सौर ऊर्जा संयंत्रों को भी भारी निवेश की आवश्यकता होती है।
  - इसके अलावा, उत्पन्न ऊर्जा की भंडारण प्रणाली महँगी है और मेगावाट उत्पादन के मामले में एक वास्तविक चुनौती का प्रतिनिधित्व करती है।
- रिसोर्स लोकेटर: अधिकांश नवीकरणीय ऊर्जा संयंत्रों को, जो अपनी ऊर्जा को ग्रिड के साथ साझा करते हैं, वृहत स्थान या क्षेत्र की आवश्यकता होती है। अधिकांश मामलों में नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत स्थान के आधार पर तय होते हैं जो उपयोगकर्त्ताओं के लिये प्रतिकूल हो सकते हैं।
  - सर्वप्रथम, कुछ नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत विभिन्न क्षेत्रों में उपलब्ध ही नहीं हैं। दूसरी बात यह कि नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत और ग्रिड के बीच की दूरी लागत और दक्षता के मामले में एक प्रमुख पहलू है।
  - इसके अलावा, नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत मौसम, जलवायु और भौगोलिक स्थिति पर निर्भर करते हैं, इसलिये इसका अर्थ है कि एक प्रकार की ऊर्जा उत्पादन क्षेत्र के लिये उपयुक्त नहीं है।

आगे की राह

- नीति निर्णयन और कार्यान्वयन में अनावश्यक देरी से बचने के लिये एक ढाँचे का निर्माण किया जाना चाहिये।
- पारंपरिक ऊर्जा स्रोतों के निष्कर्षण, उत्पादन और उपयोग में दक्षता बढ़ाने की आवश्यकता है।

- नवीकरणीय परियोजनाओं के वित्तपोषण के लिये सुदृढ़ वित्तीय उपायों की आवश्यकता है, साथ ही हरित बॉण्ड, संस्थागत ऋण और स्वच्छ ऊर्जा कोष जैसे अभिनव कदम उठाये जाने चाहिये, जो कि पारंपरिक स्रोतों (कोयला, प्राकृतिक गैस) हेतु निवेश को प्रभावित नहीं करते हों।
- नवीकरणीय ऊर्जा क्षेत्र में, विशेष रूप से भंडारण प्रौद्योगिकी में अनुसंधान और विकास को बढ़ावा दिया जाना चाहिये।
- भारत को एक सौर अपशिष्ट प्रबंधन और विनिर्माण मानक नीति (Solar Waste Management and Manufacturing Standards Policy) की आवश्यकता है।

निष्कर्ष

मौजूदा संकट भारत के लिये भी सबक है, जो नवीकरणीय प्रौद्योगिकियों के उपयोग की महत्त्वाकांक्षी योजनाएँ रखता है लेकिन उसे यूरोपीय देशों की तरह वित्तीय सहायता उपलब्ध नहीं है। सस्ते और विश्वसनीय ऊर्जा स्रोतों को तब तक नहीं छोड़ा जाना चाहिये जब तक कि विकल्पों (यानी नवीकरणीय स्रोत) का सही ढंग से परीक्षण न हो जाए।

यदि तेल की कीमतें बढ़ती हैं तो इससे भारत पर विशेष प्रभाव पड़ेगा, क्योंकि यह सालाना लगभग 1.4 बिलियन बैरल तेल का आयात करता है। लेकिन नए तेल और गैस भंडार के विकास में ताज़ा निवेश का स्तर वैश्विक स्तर पर मंद हो रहा है, जिसका एक कारण जलवायु कार्रवाई है और इसके कारण कच्चे तेल की कीमत बहु-वर्षीय उच्च स्तर पर है।

दृष्टि The Vision

भूगोल एवं आपदा प्रबंधन

शहरी भारत में आपदा प्रबंधन

संदर्भ

चेन्नई में हाल ही में हुई अप्रत्याशित भारी बारिश की घटनाओं ने बार-बार मानसूनी बाढ़ और शहर के बंद होने (Urban Paralysis) जैसी समस्याओं को जन्म दिया। इसके साथ ही इसने चरम मौसमी घटनाओं के कारण शहरी व्यवस्था के पतन के जोखिमों को भी उजागर किया। अतीत में चेन्नई में वर्ष वर्ष 2015 में आई विनाशकारी बाढ़ और मुंबई में वर्ष 2005 में उत्पन्न हुई भीषण बाढ़ की स्थिति के बाद उम्मीद थी कि शहरी विकास के संबंध में प्राथमिकताओं में एक बड़ा परिवर्तन देखने को मिलेगा।

किंतु भारी सामुदायिक समर्थन और परिवर्तन के लिये सक्रिय लामबंदी के बावजूद, कानून बस दिखावे भर के लिये बने रहे और शहरी वातावरण में असंवहनीय परिवर्तन होते रहे। पारिस्थितिकी की कीमत पर स्थायी, अभिजात निर्माणों को समर्थन दिया गया। यह उपयुक्त समय है सरकार समझे कि शहरी भारत को वर्तमान में आकर्षक रेट्रोफिटेड 'स्मार्ट' एन्क्लेव की आवश्यकता नहीं है, बल्कि उसे आवश्यकता सुदृढ़, कार्यात्मक महानगरीय शहरों की है।

शहरी नगर और आपदा प्रबंधन

- भारत की आपदा संवेदनशीलता: राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन प्राधिकरण (National Disaster Management Authority-NDMA) के अनुसार, भारत में कुल भूमि का लगभग 12% बाढ़ के खतरे से युक्त है, 68% सूखा, भूस्खलन एवं हिमस्खलन के प्रति संवेदनशील है और 58.6% भूभाग भूकंप-प्रवण है।
  - भारत की 7,516 किलोमीटर लंबी तटरेखा के 5,700 किमी. हिस्से के लिये सुनामी और चक्रवात एक नियमित घटना है।
  - इस तरह की संवेदनशील परिस्थितियों के कारण भारत विश्व के प्रमुख आपदा-प्रवण देशों में शामिल है।
- शहरों के लिये नीति आयोग की रिपोर्ट: नीति आयोग ने 'भारत में शहरी नियोजन क्षमता में सुधार' विषय पर अपनी रिपोर्ट में कोविड-19 महामारी को एक भविष्यसूचक क्षण के रूप में उद्धृत किया है जो वर्ष 2030 तक सभी शहरों के स्वस्थ शहर में परिणत होने की अनिवार्य आवश्यकता को रेखांकित करता है।
  - जलवायु प्रभावों द्वारा शहरों को अधिक मौलिक और स्थायी रूप से प्रभावित किया जाना तय है।
    - यह नागरिकों की आवश्यकताओं एवं आकांक्षाओं का आकलन करने के लिये भागीदारी योजना उपकरण, सर्वेक्षण और फोकस समूह चर्चा को अपनाने के साथ 500 प्राथमिकता शहरों को एक प्रतिस्पर्द्धी ढाँचे में शामिल करने की सिफारिश करता है।
- प्रभाव:
  - चक्रवातों के कारण वृक्षों के बड़े पैमाने पर उखड़ने से शहरी क्षेत्रों में पहले से ही घट रहे हरित आवरण प्रभावित होते हैं।
  - भारी आबादी वाले शहरी क्षेत्रों में आपदाओं के कारण बड़ी संख्या में मानव जीवन की हानि हो सकती है।
    - असुरक्षित/कमज़ोर बुनियादी संरचनाएँ, जो भूकंप या सुनामी में ढह जाती हैं, किसी भी अन्य प्रकार के प्राकृतिक खतरे (जैसे बवंडर या तूफान) की तुलना में अधिक लोगों की जान लेती हैं।
  - आपदाएँ आधारभूत संरचनाओं को तबाह कर देती हैं और इनसे व्यापक आर्थिक क्षति होती है।
    - विश्व बैंक का अनुमान है कि वार्षिक आपदा क्षति 520 बिलियन डॉलर तक पहुँच चुकी है और ये आपदाएँ प्रति वर्ष 24 मिलियन लोगों को निर्धनता की ओर धकेलती हैं।

चुनौतियाँ:

- नियोजन और स्थानीय शासन की समस्याएँ: सभी शहरों में से आधे से भी कम में 'मास्टर प्लान' मौजूद हैं और इन पर भी अनौपचारिक रूप से ही अमल होता है क्योंकि प्रभावशाली अभिजात वर्ग और गरीब वर्ग दोनों ही आर्द्रभूमि और नदी तटों जैसी सार्वजनिक भूमियों का अतिक्रमण करते हैं।

- नगर परिषदों की उपेक्षा, सशक्तीकरण की कमी और नगरपालिका प्राधिकारों में क्षमता निर्माण की विफलता ने चरम मौसम के दौरान बार-बार शहरी पक्षाघात की स्थिति उत्पन्न की है।

- प्राकृतिक स्थानों का अतिक्रमण: देश में आर्द्रभूमि की संख्या वर्ष 1956 में 644 से घटकर वर्ष 2018 में 123 रह गई और हरित आवरण महज 9% है, जो आदर्श रूप से कम से कम 33% होना चाहिये था।
  - महत्त्वपूर्ण सार्वजनिक संपत्तियों का अतिक्रमण किफायती शहरी आवासों की आपूर्ति हेतु बाज़ार की शक्तियों पर अत्यधिक निर्भरता को प्रकट करता है।
  - आवास क्षेत्र में अधिकांश उपनगरीय निवेश उनके वास्तविक मूल्य को नहीं दर्शाते, भले ही वे सरकार द्वारा 'अनुमोदित' हों, क्योंकि नगर से दूर स्थित इन नगर पंचायतों के पास जल आपूर्ति, स्वच्छता और सड़कों जैसी बुनियादी संरचनाओं के निर्माण की भी पर्याप्त क्षमता या धन का अभाव होता है।
- अपर्याप्त निकासी अवसंरचना: जल निकासी तंत्र पर अत्यधिक दबाव, अनियमित निर्माण, प्राकृतिक स्थलाकृति एवं 'हाइड्रो-जियोमॉर्फोलॉजी' की अवहेलना आदि शहरी बाढ़ को एक मानव निर्मित आपदा बनाते हैं।
  - हैदराबाद, मुंबई जैसे शहर एक सदी पुरानी जल निकासी प्रणाली पर निर्भर हैं, जो मुख्य शहर के केवल एक छोटे से हिस्से को ही दायरे में लेती है।
    - शहरों के विस्तार के साथ उपयुक्त जल निकासी व्यवस्था के अभाव को दूर करने के लिये अधिक प्रयास नहीं किया गया।
- कार्यान्वयन में शिथिलता: पर्यावरणीय प्रभाव आकलन (Environmental Impact Assessment- EIA) जैसे नियामक तंत्रों में वर्षा जल संचयन, संवहनीय शहरी जल निकासी प्रणाली आदि के प्रावधानों के बावजूद उपयोगकर्ता के साथ-साथ प्रवर्तन एजेंसियों के स्तर पर इनके अंगीकरण की गति शिथिल रही है।

आगे की राह

- स्थानीय स्वशासन की भूमिका: वृहत समावेशन और समुदाय की भावना को सुनिश्चित करने के लिये लोकतांत्रिक रूप से चुनी गई स्थानीय सरकारों को केंद्रीय भूमिका सौंपे जाने की आवश्यकता है।
  - जलवायु परिवर्तन अनुकूलन के लिये एक शीर्ष-स्तरीय विभाग का निर्माण करना उपयुक्त होगा जो आवास एवं शहरी विकास, परिवहन, जल आपूर्ति, ऊर्जा, भूमि उपयोग, लोक कार्य और सिंचाई जैसे राज्य के सभी संबंधित विभागों का समन्वय करेगा और उन्हें निर्वाचित स्थानीय सरकार के साथ मिलकर कार्य करने में सक्षम बनाएगा। प्राथमिकताओं के निर्धारण और उत्तरदायित्व के वहन में इस शीर्ष विभाग की प्रमुख भूमिका होगी।
- समग्र संलग्नता: ऊर्जा एवं संसाधनों के ठोस और केंद्रित निवेश के बिना वृहत स्तरीय शहरी बाढ़ को अकेले नगरपालिका अधिकारियों द्वारा नियंत्रित करना संभव नहीं होगा।
  - नगर निगमों के साथ-साथ महानगर विकास प्राधिकरण, NDMA और राज्य के राजस्व एवं सिंचाई विभागों को इस तरह के कार्य के लिये एक साथ संलग्न करना होगा।
- बेहतर शहर नियोजन: सस्ते आवास सहित शहर के विकास के सभी आयाम भविष्य के जलवायु परिवर्तन के प्रति अनुकूल होने में केंद्रीय भूमिका निभाते हैं।
  - वे आधारभूत संरचना निर्माण के दौरान भी कार्बन उत्सर्जन वृद्धि को कम कर सकते हैं यदि बायोफिलिक डिज़ाइन (biophilic design) और हरित सामग्री का उपयोग किया जाए।
  - नियोजित शहरीकरण आपदाओं का सामना कर सकता है। इसका आदर्श उदाहरण जापान है जो नियमित रूप से भूकंप का सामना करता रहता है।
    - भारत आपदा संसाधन नेटवर्क (India Disaster Resource Network) को व्यवस्थित सूचना और साधन एकत्रीकरण (Equipment Gathering) के लिये एक निधान (Repository) के रूप में संस्थागत किया जाना चाहिये।

- 'ड्रेनेज प्लानिंग': नीति और कानून में वाटरशेड प्रबंधन और आपातकालीन निकासी योजना/ड्रेनेज प्लानिंग को स्पष्ट रूप से व्यक्त किया जाना चाहिए।
  - अर्बन वाटरशेड सूक्ष्म पारिस्थितिक जल निकासी प्रणाली (Micro Ecological Drainage Systems) हैं, जो भूभाग की आकृति के अनुरूप आकार ग्रहण करते हैं।
  - इनका विस्तृत दस्तावेज उन एजेंसियों के पास होना चाहिये जो नगरपालिका के अधिकार क्षेत्र से बंधे नहीं हैं। वास्तव में निकासी योजना को आकार देने के लिये चुनावी वार्ड जैसे शासनिक सीमाओं के बजाय वाटरशेड जैसी प्राकृतिक सीमाओं पर विचार किया जाना अधिक उपयुक्त होगा।

निष्कर्ष

भारत के शहर उत्पादन और उपभोग के उल्लेखनीय स्तर के साथ देश के आर्थिक विकास के चालक हैं, लेकिन इस विकास कथा को जलवायु परिवर्तन के युग में असंवहनीय शहरी विकास से खतरा है। आवश्यकता ऐसे सुदृढ़, कार्यात्मक महानगरीय शहरों का विकास करने की है जो अर्थव्यवस्था के इंजनों को चालू रखने के लिये बाढ़, ग्रीष्म लहर, प्रदूषण और जन गतिशीलता को संभाल सकें। ऐसा नहीं हुआ तो शहरी भारत एक सबप्राइम निवेश भर बनकर रह जाएगा।

दृष्टि The Vision